भजन		पृष्ठसंख्या

सूरदासजी

भजन	पृष्ठसंख्या

⊛ यह भजन पृ० ९१में दुबारा छप गया है। अगले संस्करणमें बदल दिया जायगा।

भजन	पृष्ठसंख्या

भजन	पृष्ठसंख्या

भजन		पृष्ठसंख्या

कबीरदासजी

मीराबाई

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः

भजन-संग्रह

(१)

राग बिलावल

गाइये गनपति जगबन्दन।
संकर-सुवन-भवानी-नन्दन ॥ १ ॥
सिद्धि-सदन, गजबदन, विनायक।
कृपा-सिंधु, सुन्दर सब लायक ॥ २ ॥
मोदक-प्रिय मुद-मंगल-दाता।
विद्या-वारिधि, बुद्धि-विधाता ॥ ३ ॥
मांगत तुलसिदास कर जोरे।
बसहिं रामसिय मानस मोरे ॥ ४ ॥

(२)

राग धनाश्री

यह विनती रघुवीर गुसाईं ।
और आस विस्वास भरोसो,
हरौ जीव-जड़ताई ॥ १ ॥
चहौं न सुगति, सुमति, सम्पति कछु,
रिधि सिधि विपुल बड़ाई ।
हेतु-रहित अनुराग राम-पद,
बढ़ै अनुदिन अधिकाई ॥ २ ॥
कुटिल करम लै जाइ मोहि,
जहँ जहँ अपनी बरिआई ।
तहँ तहँ जनि छिन छोह छांड़िये,
कमठ-अण्डकी नाईं ॥ ३ ॥

या जगमें जहँ लगि या तनुकी,
प्रीति प्रतीति सगाई ।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सों,
होहिं सिमिटि इक ठाईं ॥ ४ ॥

(२)

राग आसावरी

लाज न आवत दास कहावत ।
सो आचरन बिसारि सोच तजि,
जो हरि तुम कहँ भावत ॥ १ ॥
सकल संग तजि भजत जाहि,
मुनि जप तप जाग बनावत ।
मो सम मंद महाखल पाँवर,
कौन जतन तेहि पावत ॥ २ ॥

हरि निरमल मल-ग्रसित हृदय,
असमंजस मोहि जनावत ।
जेहि सर काक कङ्क बक सूकर,
क्यों मराल तहँ आवत ॥ ३ ॥

जाकी सरन जाइ कोबिद,
दारुन त्रयताप बुझावत ।
तहूँ गये मद मोह लोभ अति,
सरगहु मिटत न सावत ॥ ४ ॥

भव-सरिता कहँ नाउ संत,
यह कहि औरनि समुझावत ।
हौं तिनसों हरि परम बैर करि,
तुम सों भलो मनावत ॥ ५ ॥

नाहिंन और ठौर मो कहँ,
तातें हठि नातो लावत ।
राखु सरन उदार-चूड़ामनि,
तुलसिदास गुन गावत ॥ ६ ॥

(४)

राग बिलावल

ते नर नरकरूप जीवत जग,
भवभञ्जन-पद-विमुख अभागी।
निसिवासर रुचि पाप असुचि मन,
खल मति मलिन निगम-पथ त्यागी॥ १॥
नहिं सतसङ्ग, भजन नहिं हरिको,
स्रवन न रामकथा अनुरागी।
सुत-वित-दार-भवन-ममता-निसि,
सोवत अति न कबहुं मति जागी॥२॥
तुलसिदास हरिनाम-सुधा तजि,
सठ,हठि पियत विषय-विष माँगी।
सूकर-स्वान-सृगाल-सरिस जन,
जनमत जगत जननि-दुख लागी॥३॥

(५)

राग गौरी

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन,
हरन-भवभय दारुनं ।
नवकञ्ज-लोचन, कंजमुख, कर-
कञ्ज, पद कञ्जारुनं ॥ १ ॥

कंदर्प अगनित अमित छवि,
नव-नील नीरद सुन्दरं ।
पट पीत मानहुँ तड़ित रुचि सुचि,
नौमि जनक-सुता-वरं ॥ २ ॥

भजु दीनबन्धु दिनेस दानव-
दैत्य वंस-निकन्दनं ।
रघुनन्द आनँद-कन्द कोसल-
चन्द दसरथ-नन्दनं ॥ ३ ॥

सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु,

उदारु अंग विभूषनं ।

आजानु-भुज सर-चाप-धर,

संग्राम-जित-खरदूषनं ॥ ४ ॥

इति बदति तुलसीदास संकर-

सेष-मुनि-मन-रंजनं ।

मम हृदय-कंज-निवास करु,

कामादि खल-दल-गंजनं ॥ ५ ॥

(६)

राग टोड़ी

तू दयालु, दीन हौं,

तू दानि, हौं भिखारी

हौं प्रसिद्ध पातकी,

तू पापपुंज-हारी ॥ १

नाथ तू अनाथ को,
अनाथ कौन मोसो ?
मो समान आरत नहिं,
आरतिहर तोसो ॥ २ ॥
ब्रह्म तू हौं जीव,
तू ठाकुर, हौं चेरो ।
तात, मात, सखा गुरु तू,
सब विधि हितु मेरो ॥ ३ ॥
तोहिं मोहिं नाते अनेक,
मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु,
चरन-सरन पावै ॥ ४ ॥

(७)

राग पीलू

रघुवर तुमको मेरी लाज ।
सदा सदा मैं सरन तिहारी
तुम हो बड़े गरीब-निवाज ॥

पतित उधारन बिरद तुम्हारो,
स्रवनन सुनी अवाज।
हौं तो पतित पुरातन कहिये,
पार उतारो जहाज॥
अघ-खंडन दुख-भंजन जनके,
यही तिहारो काज।
तुलसिदासपर कृपा करिये,
भक्ति दान देहु आज॥

(८)

राग आसावरी

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय
मानि जानि डरिये॥१॥

जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन,
सो हठि परिहरिये ॥
जाते विपति-जाल निसिदिन दुख,
तेहि पथ अनुसरिये ॥ २ ॥
जानत हूं मन वचन करम,
परहित कीन्हें तरिये ॥
सो विपरीत देखि परसुख,
बिनु कारन ही जरिये ॥ ३ ॥
स्रुति पुरान सबको मत,
यह सतसंग सुदृढ़ धरिये ॥
निज अभिमान मोह ईर्षा बस,
तिनहिं न आदरिये ॥ ४ ॥
संतत सोइ प्रिय मोहिं सदा,
जाते भवनिधि परिये ॥
कहौ अब नाथ कौन बलतें,
संसार सोक हरिये ॥ ५ ॥

जयकब निज करुना-सुभावतें
द्रवहु तौ निस्तरिये ॥
तुलसिदास बिस्वास आन नहि,
कत पचि पचि मरिये ॥ ६ ॥

(६)

राग धनाश्री

अबलौं नसानी, अब न नसैहौं ।
राम कृपा भव-निसा सिरानी,
जागे पुनि न डसैहौं ॥ १ ॥
पायो नाम चारुचिन्तामनि,
उर करते न खसैहौं ।
स्यामरूप सुचि रुचिर कसौटी,
चित कञ्चनहि कसैहौं ॥ २ ॥
परबस जानि हँस्यो इन इन्द्रिन
निज बस ह्वै न हँसैहौं ।

मन मधुकर पनकै तुलसी,

रघुपति पद कमल बसैहौं ॥३॥

(१०)

राग धनाश्री

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे।

काको नाम पतित-पावन जग,

केहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥

कौने देव बराइ बिरद-हित,

हठि हठि अधम उधारे।

खग, मृग, व्याध पपान, विटप-

जड़, जवन कवन सुर तारे ॥ २ ॥

देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज, सब

माया-बिबस बिचारे।

तिनके हाथ दासतुलसी प्रभु,

कहा अपनपौ हारे ॥ ३ ॥

(११)

राग कल्याण

जाउँ कहाँ, ठौर है कहाँ

देव ! दुखित दीन को ।

को कृपालु स्वामी सारिखो राखै

सरनागत सब अंग बल-बिहीनको ॥ १ ॥

गनिहिं गुनिहिं साहिब लहै,

सेवा समीचीनको ।

अधन अगुन आलसिनको पालिबो

फबि आयो रघुनायक नवीनको ॥ २ ॥

मुखके कहा कहौं बिदित है

जी की प्रभु प्रबीनको ।

तिहूं काल, तिहुं लोकमें एक टेक

रावरी तुलसीसे मन मलीनको ॥ ३ ॥

(१२)

राग विलास

हे हरि, कवन जतन भ्रम भागै।

देखत सुनत, विचारत यह मन,
निज सुभाउ नहिं त्यागै ॥ १ ॥

भक्ति, ग्यान, वैराग्य सकल,
साधन यहि लागि उपाई।
कोउ भल कहउ देउ कछु कोउ,
असि बासना हृदयते न जाई ॥ २ ॥

जेहि निसि सकल जीव सूतहिं,
तव कृपापात्र जन जागै।
निज करनी विपरीत देखि मोहि,
समुझि महाभय लागै ॥ ३ ॥

जद्यपि भग्न मनोरथ विधिवस,

सुख इच्छित दुख पावै।

चित्रकार कर हीन जथा,

स्वारथ विनु चित्र बनावै॥ ४॥

हृषीकेस सुनि नाम जाउँ, बलि

अति भरोस जिय मोरे।

तुलसिदास इन्द्रिय-सम्भव दुख,

हरे बनिहि प्रभु तोरे॥ ५॥

(१२)

राग धनाश्री

मेरो मन हरिजू! हठ न तजै।

निसिदिन नाथ! देउँ सिख बहु विधि,

करत सुभाउ निजै॥ १॥

ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति

दारुन दुख उपजै।

ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ,
पुनि खल पतिहिं भजै ॥ २ ॥
लोलुप भ्रमत गृहपसु ज्यौं
जहँ तहँ, सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग,
कबहुं न मूढ़ लजै ॥ ३ ॥
हौं हार्यौ करि जतन बिबिध बिधि,
अतिसै प्रबल अजै ।
तुलसिदास बस होइ तबहिं
जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥ ४ ॥

(१४)

राग नट

मैं हरि, पतित-पावन सुने ।
मैं पतित तुम पतित-पावन,
दोउ बानक बने ॥ १ ॥

व्याध गनिका गज अजामिल,
साखि निगमनि भने।
और अधम अनेक तारे,
जात कापै गने ॥ २ ॥
जानि नाम अजानि लीन्हें,
नरक यमपुर मने।
दासतुलसी सरन आयो,
राखिये अपने ॥ ३ ॥

(१५)

राग सोरठ

ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै दीनपर,
राम सरिस कोउ नाहीं ॥ १ ॥
जो गति जोग बिराग जतन करि,
नहिं पावत मुनि ग्यानी।

सो गति देत गीध सवरी कहँ,
प्रभु न वहुत जिय जानी ॥ २ ॥
जो सम्पति दससीस अरपि करि,
रावन सिव पहँ लीन्हीं ।
सो सम्पदा विभीषन कहँ अति,
सकुच-सहित हरि दीन्हीं ॥ ३ ॥
तुलसिदास सब भाँति सकल, सुख
जो चाहसि मन मेरो ।
तौ भजु राम, काम सब पूरन,
करहिं कृपानिधि तेरो ॥ ४ ॥

(१६)

राग भैरव

राम जपु, राम जपु,
राम जपु, बावरे ।
घोर-भव-नीर-निधि
नाम निज नाव रे ॥ १ ॥

एकही साधन सब
रिद्धि सिद्धि साधि रे।
ग्रसे कलिरोग जोग
संजम समाधि रे॥ २॥
भलो जो है, पोच जो है,
दाहिनो जो बाम रे।
राम-नाम ही सों अन्त
सब ही को काम रे॥ ३॥
जग नभ-वाटिका रही है
फलि फूलि रे।
धुवाँ कैसे धौरहर
देखि तू न भूलि रे॥ ४॥
राम नाम छांड़ि जो
भरोसो करै और रे।

तुलसी परोसो त्यागि
माँगै कूर कौर रे॥ ५॥

(१७)

राग धनाश्री

ऐसी मूढ़ता या मनकी।
परिहरि राम-भक्ति सुरसरिता
आस करत ओसनकी।
धूम समूह निरखि चातक ज्यों,
तृषित जानि मति घनकी॥
नहिँ तहँ सीतलता न बारि
पुनि हानि होति लोचनकी।
ज्यों गच काँच बिलोकि सेन
जड़ छाँह आपने तनकी॥
टूटत अति आतुर अहार बस,
छति बिसारि आननकी॥

कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि
जानत हौ गति जनकी।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख
करहु लाज निज पनकी॥

(१८)

राग सोरठ

जाके प्रिय न राम-बैदेही।
सो छाँड़िये कोटि बैरी सम,
जद्यपि परम स्नेही॥१॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन
बन्धु, भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनितनि
भये मुद मंगलकारी॥२॥

नाते नेह रामके मनियत
सुहृद सुसेव्य जहां लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै
बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥ ३ ॥
तुलसी सो सब भांति परमहित
पूज्य प्राणते प्यारो।
जासों होय सनेह रामपद
एतो मतो हमारो ॥ ४ ॥

(१६)

जागिये रघुनाथ कुँवर पंछी बन बोले।
चन्द-किरन सीतल भई चकई पिय मिलन गई,
त्रिविध मंद चलत पवन पल्लव द्रुम डोले ॥
प्रात भानु प्रगट भयो रजनीको तिमिर गयो,
भृंग करत गुञ्जगान कमलन दल खोले ॥

ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुर नर मुनि करत गान ,
जागनकी बेर भई नयन पलक खोले ॥
तुलसिदास अति अनंद निरखिके मुखारबिन्द ,
दीननको देन दान भूषन बहु मोले ॥

(२०)

राग छाया

कुटंब तजि सरन राम तेरी आयो ।
तज गढ़ लंक महल और मन्दिर,
नाम सुनत उठि धायो ।
भरी सभामें रावण बैठ्यो
चरन प्रहार चलायो ।
मूरख अन्ध कह्यो नहिं मानत
बार बार समझायो ।
आवत ही लंकापति कीन्हो

हरि हँसि कंठ लगायो।
जन्म जन्मके मिटे पराभव
राम दरस जब पायो।
हे रघुनाथ अनाथके बन्धु
दीन जानि अपनायो।
तुलसिदास रघुबरकी सरन
भक्ति अभय पद पायो।

(२१)

राग केदारा

हरिको ललित बदन निहारु।
निपटहि डांटति निठुर ज्यों
लकुट करते डारु॥
मंजु अंजन सहित जल-कन
चुवत लोचन चारु।

स्याम सारस मग मनो
ससि स्रवत सुधा सिंगारु।
सुभग उर-दधि बुंद सुन्दर
लखि अपनपौ वारु।
मनहुं मरकत मृदु सिखरपर
लसत बिसद तुषारु॥
कान्ह हूं पर सतर भौहैं
महरि मनहिं बिचारु।
दास तुलसी रहत क्यों रिस
निरखि नंद-कुमारु॥

(२२)

राग गौरी

टेरि कान्ह गोवर्धन चढ़ि गैया।
मथि मथि पियो बारि चारिकमैं
भूषन ज्योति अघाति न घैया॥

सैल सिखर चढ़ि चितै चकित चित
अति हित वचन कह्यो बल भैया॥
बांधि लकुटपर फेरि बोलाई,
सुनि कल वेनु धेनु धुकि धैया॥
बलदाउ देखियत दूरिते
आवति छाक पठाई मेरी मैया।
किलकि सखा सब नचत मोर ज्यों
कूदत कपि कुरंगकी नैया॥
खेलत खात परस्पर डहँकत
छीनत कहा करत रोग दैया।
तुलसी बालकेलि सुख निरखत
बरसत सुमन सहित सुरसैया॥

(२३)

राग गौरी

गोपाल गोकुल बल्लवी प्रिय
गोप गोसुत बल्लभं

चरनारविन्दमहं भजे भजनीय
सुर मुनि दुर्लभं।
घनस्याम काम अनेक छवि
लोकाभिराम मनोहरं।
किंजल्क बसन किसोर मूरति
भूरि गुन करुनाकरं।
सिर केकिपच्छ बिलोल कुंडल
अरुन बनरुह लोचनं।
गुंजावतंस विचित्र सब अँग
धातु भवभय-मोचनं।
कच कुटिल सुन्दर तिलक भ्रू
राका मयंक समाननं।
अपहरन तुलसीदास त्रास
विहार वृन्दा-काननं।

(२४)

राग गौरी

छाड़ो मेरे ललित ललन लरिकाई।

एहैं सुत देखुवार कालि तेरे बबैं

ब्याहकी बात चलाई॥

डरिहैं सासु ससुर चोरी सुनि

हँसिहैं नई दुलहिया सुहाई॥

उबटि नहाहु गुहौं चोटिया बलि

देखि भलो बर करहिं बड़ाई॥

मातु कह्यो करि कहत बोलि दै

भइ बड़ि बेर कालि तो न आई।

जब सोइबो तात यों हौं कहि

नयन मीचि रहे पौढि कन्हाई॥

उठि कह्यो भोर भयो झंगुली दै

मुदित महर लखि आतुरताई।

बिहँसी ग्वालि जान तुलसी प्रभु
सकुचि लगे जननी उर धाई ॥

(२५)

राग आसावरी

ममता तू न गई मेरे मन तें ।
पाके केस जन्मके साथी,
लाज गई लोकनते ॥
तन थाके कर कम्पन लागे
जोति गई नैननते ।
स्रवन वचन न सुनत काहुके
बल गये सब इन्द्रिनते ॥
टूटे दसन बचन नहिं आवत
शोभा गई मुखनते ।
कफ पित बात कंठपर बैठे
सुतहिं बुलावत करते ॥

भाइ वन्धु सव परम पियारे
नारि निकारन घरते।
जैसे ससि मण्डल विच स्याही
छुटै न कोटि जतन तें॥
'तुलसिदास' वलि जाउँ चरनते
लोभ पराये भनते।

(२६)

प्रभुजू तुम हौ अंतरयामी।
तुम लायक भोजन नहिं गृहमें,
अरु नाहीं गृह स्वामी॥ १॥
हरि कह्यो साग पत्र जो मोहिं प्रिय,
अमृत या सम नाहीं।
वारम्वार सराहि सूर प्रभु,
शाक विदुर घर खाहीं॥ २॥

(२७)

छांड़ि मन, हरि-विमुखनको सङ्ग ।
जिनके संग कुबुधि उपजति है परत भजनमें भंग॥
कहा होत पय पान कराये विष नहिं तजत भुजंग।
कागहिं कहा कपूर चुगायो स्वान न्हवाये गंग॥
खरको कहा अरगजा-लेपन मर्कट भूषन अंग।
गजको कहा न्हवाये सरिता बहुरि धरै खहि छंग॥
पाहन पतित बाँस नहिं बेधत रीतो करत निषंग।
सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग॥

(२८)

राग सोरठ

क्यों दासी सुतके पांव धारे।
भीषम कण द्रोण मन्दिर तजि,
मम गृह तजे मुरारे।

सुनियत दीन हीन वृषली सुत,
जाति पांति ते न्यारे ॥ १ ॥

तिनके जाय कियो तुम भोजन,
यदुवंशी सब लाजनि मारे।
हरिजू कहैं सुनो दुर्योधन,
सोइ कृपन मम चरन बिसारे ॥ २ ॥

वेई भक्त भागवत वेई
राग द्वेषते न्यारे।
सूरदास प्रभु नंद-नँदन कहैं,
हम ग्वालन जुठिहारे ॥ ३ ॥

(२६)

निसिदिन बरसत नैन हमारे।

सदा रहत पावस ऋतु हमपर,
जबसे श्याम सिधारे ॥ १ ॥

अंजन थिर न रहत अंखियनमें,
कर कपोल भये कारे।
कंचुकि पट सूखत नहिं कबहूं,
उर बिच बहत पनारे॥ २॥
आँसू सलिल भये पग थाके,
बहे जात सित तारे।
सूरदास अब डूबत है ब्रज,
काहे न लेत उबारे॥ ३॥

(३०)

राग मल्हार

मधुकर! इतनी कहियहु जाइ।
अति कृस गात भई ये तुम बिनु,
परम दुखारी गाइ॥

जल-समूह बरसत दोउ आंखैं,

हूंकति लीने नाउँ।

जहाँ-तहाँ गोदोहन कीनौं,

सूँघति सोई ठाउँ॥

परति पछार खाइ छिनहीं छिन,

अति आतुर ह्वै दीन।

मानहुं सूर काढ़ि डारी है,

वारि-मध्यतें मीन॥

(३१)

राग काफी

सांवरेसों कहियो मोरी। टेक

सीस नवाय चरण गहि लीज्यौ,

करि विनती कर जोरी।

ऐसी चूक परी कहा मोसों,
प्रीति पाछिली तोरी॥
सुरति ना लीन्हि बहोरी॥ १॥
भूषन बसन सबै तजि दीन्हें,
खान पान बिसरोरी।
बिभूति रमाय जोगिन ह्वै बैठी,
तेरो ही ध्यान धरोरी॥
अब मैं कैसी करोंरो॥ २॥
निसिदिन व्याकुल फिरति राधिका,
बिरह बिथा तनु घेरी।
बारि करेजा जारि दियो है,
अब मैं कैसी करोंरी॥
बेगि चलि आओ किसोरी॥ ३॥
रोम रोम बिष छाय रह्यो है,
मधु मेरे बैर परोरी।

श्याम तुम्हें ढूंढ़त कुञ्जनमें,
सीस जटा गहि झोरी, ॥
कहों हरि हो हरि होरी ॥ ४ ॥
जा दिन गमन कियो मथुरामें,
गोपिन सुध बिसरोरी।
हमको जोग भोग कुवजाको,
का तकसीर है मोरी ॥
कहा कछु कीन्ही चोरी ॥ ५ ॥
सूरदास प्रभुसों जा कहियो,
आवें अवधि रहि थोरी।
प्राण दान दीजै नँदनन्दन,
गावत कीरति तोरी ॥
प्रीति अब कीजै वहोरी ॥ ६ ॥

(३२)

राग आसावरी

ऊधो ! मैंने सब कारे अजमाये।

कोयलके सुत कागा पाले,

हँसि हँसि कण्ठ लगाये।

पंख जमे तब ऊड़न लागे,

कुल अपनेको धाये॥

कारे नाग पिटारीमें पारे

हित करि दूध पिलाये।

जब सुधि आई अपने कुटुँबकी

अंगुरिनमें डसि खाये॥

कारे भँवरा मदके लोभी

कली देखि मँडराये।

जब वह खिलकर गिरी धरनिपर,
फेर दरस नहिं पाये ॥
कारे केस सीसपर राखे,
अतर फुलेल लगाये ।
सो कारे नहिं भये आपने,
स्वेत रूप दरसाये ॥
कारेकी परतीत न कीजे,
कारे जहर बुझाये ।
सूर स्यामको कहा अजमैये,
बार बार अजमाये ॥

(३३)

राग बागेश्री

वन्दौं चरनसरोज तुम्हारे ।
सुन्दर स्याम कमल-दल लोचन,
ललित त्रिभंगी प्राणनि प्यारे ॥

जे पद-पदुम सदा सिवके धन,

सिन्धुसुता उरतें नहिं टारे।

जे पद-पदुम तातरिस-त्रासित,

मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे॥

जे पद-पदुम परसि जल पावन,

सुरसरि दरस कटत अघ भारे।

जे पद-पदुम परसि रिपिपतिनी,

बलि नृग ब्याध पतित बहु तारे॥

जे पद-पदुम रमत बृन्दावन,

अहि सिर धरि अगनित रिपु मारे।

जे पद-पदुम परसि ब्रजभामिनि,

सरबसु दै सुत-सदन बिसारे॥

जे पद-पदुम रमत पांडवदल,

दूत होइ सब काज सँवारे।

सूरदास तेई पदपंकज,
त्रिविध ताप दुखहरन हमारे ॥

(३४)

राग भैरवी

वड़ी है रामनामकी ओट ।
सरन गये प्रभु काढ़ि देत नहिं,
करत कृपाके कोट ॥
बैठत सभा सबै हरिजूकी,
कौन वड़ो को छोट ।
सूरदास पारसके परसे,
मिटत लोहको खोट ॥

(३५)

राग भैरवी

रे मन, कृष्णनाम कहि लीजै ।
गुरुके बचन अटल करि मानहु,
साधुसमागम कीजै ।

पढ़िये गुनिये भक्ति भागवत,
और कहा कथि कीजै ।
कृष्णनाम बिन जनमु बादि ही,
बिरथा काहे जीजै ॥
कृष्णनाम-रस बह्यो जात है,
तृषावन्त ह्वै पीजै ।
सूरदास हरिसरन ताकिये,
जनम सफल करि लीजै ॥

(३६)

राग धनाश्री

है हरिनामको आधार ।
और या कलिकाल नाहिंन,
रह्यो बिधि-ब्योहार ॥

नारदादि सुकादि संकर,

किया यहै विचार ।

सकल स्रुति-दधि-मथत पायो,

इतो यह घृतसार ॥

दसहु दिसि गुन करम रोक्यो,

मीनको ज्यों जार ।

सूर हरिके भजनबलतें,

मिटि गयो भव-भार ॥

(३७)

राग सारंग

आजु हौं एक-एक करि टरिहौं ।

कै हमहीं कै तुमहीं माधव,

अपुन भरोसे लरिहौं ॥

हौं तो पतित सात पीढ़िनको

पतितै ह्वै निस्तरिहौं ।

अब हौं उघरि नचन चाहत हौं,
तुम्हैं बिरद बिनु करिहौं॥
कत अपनी परतीति नसावत,
मैं पायो हरि हीरा।
सूर पतित तबहीं लै उठिहै,
जब हँसि दैहो बीरा॥

(३८)

राग आसावरी

भजन बिनु कूकर सूकर जैसो।
जैसे घर बिलावके मूसा,
रहत विषय-बस तैसो॥
बकी और बक गीध्र गीधनी,
आइ जन्म लिय वैसो।
उनहू के ये सुत दारा हैं,
इन्हैं भेद कहु कैसो॥

जीव मारिकै उदर भरत हैं,
तिनके लेखे ऐसो ।
सूरदास भगवन्त-भजन बिनु,
मनो ऊँट खर भैंसो ॥

(३६)

राग आसावरी

भगति बिनु बैल बिराने ह्वैहौ ।
पाँव चारि सिर सींग गूंग मुख,
तव गुन कैसे गैहौ ।
टूटे कन्ध सु फूटी नाकनि,
कौलौं धौं भुस खैहौ ॥
लादत जोतत लकुट बाजिहै,
तव कहँ मूंड़ दुरैहौ ।
सीत घाम घन बिपति बहुत बिधि,
भार तरे मरि जैहौ ॥

हरि-दासनको कह्यो न मानत,
किये आपुनो पैहौ ।
सूरदास भगवन्त-भजन विनु,
मिथ्या जनम गँवैहौ ॥

(४०)

राग तिलक

मैया! मोरी, मैं नहिं माखन खायो।
भोर भयो गैयनके पाछे,
मधुवन मोहिं पठायो।
चार पहर बंसीवट भटक्यौ,
सांझ परे घर आयो ॥
मैं बालक बहिंयनको छोटो,
छींको किहि विधि पायो।
ग्वाल बाल सब बैर परे हैं,
बरबस मुख लपटायो ॥

तू जननी मनकी अति भोरी,
इनके कहे पतिआयो।
जिय तेरे कछु भेद उपजहै,
जानि परायो जायो॥
यह ले अपनी लकुट कमरिया,
बहुतहि नाच नचायो।
सूरदास तब विहंसि यसोदा,
लै उर कण्ठ लगायो॥

(४१)

राग भीमपलासी

रे मन जन्म पदारथ जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वैहैं,
ज्यों तरवरके पात॥ १॥
सन्निपात कफ कंठ विरोधी,
रसना टूटी जात।

प्रान लिये जम जात मूढ़मति,
देखत जननी तात ॥ २ ॥
छिन इक मांहि कोटि जुग बीतत,
पीछे नर्कको बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमरकी,
चाखत ही उड़ि जात ॥ ३ ॥
जमके फंद नहीं पड़ु बौरे,
चरनन चित्त लगात।
कहत सूर बिरथा यह देही,
अन्तर क्यों इतरात ॥ ४ ॥

(४२)

राग सारंग

वा पट पीतकी फहरान !
कर धरि चक्र चरनकी धावनि,
नहिं बिसरति यह बान ॥

रथते उतरि अवनि आतुर ह्वै,

कच-रजकी लपटान ।

मानो सिंह सैलतें निकस्यो,

महामत्त गज जान ॥

जिन गुपाल मेरो प्रन राख्यो,

मेटि वेदकी कान ।

सोई सूर सहाय हमारे,

निकट भये हैं आन ॥

(४३)

राग सारंग

आज जो हरिहिं न सस्त्र गहाऊं ।

तौ लाजौं गंगाजननीको,

सांतनु सुत न कहाऊं ॥

स्यन्दन खंडि महारथ खंडौं,

कपिध्वज सहित डुलाऊं ।

इतो न करौं सपथ मोहिं हरिकी,
छत्रिय गतिहिं न पाऊं॥
पाण्डव दलसन्मुख ह्वै धाऊं,
सरिता रुधिर बहाऊं।
सूरदास रनभूमि विजय बिनु,
जियत न पीठ दिखाऊं॥

(४४)

राग भीमपलासी

सबसों ऊंची प्रेम सगाई।
दुर्योधनके मेवा त्यागे,
साग बिदुर घर खाई॥
जूंठे फल सबरीके खाये,
बहु बिधि स्वाद बताई।
प्रेमके बस नृप सेवा कीन्हीं,
आप बने हरि नाई॥
राजसुयज्ञ युधिष्ठिर कीनो,
तामें जूंठ उठाई।

प्रेमके वस पारथ-रथ हांक्यो,
भूल गये ठकुराई ॥
ऐसी प्रीति बढ़ी वृन्दावन,
गोपिन नाच नचाई।
सूर क्रूर इहि लायक नाहीं,
कहँ लग करौं बड़ाई ॥

(४५)

राग भीमपलासी

मन भीतर है बास हमारो।
हमको लै करि तुमहि छुपायो,
कहा कहति यह दोप तुम्हारो ॥
अजहुं कहो रैहैं हम अनतहि,
तुम अपनो मन लेहु।
अव पछितानी लोकलाज उर,
हमहिं छांड़ि तैं देहु ॥

घटती होइ जाहिते अपनी,
ताको कीजै त्याग।
धोखे कियो वास मन भीतर,
अब समुझै भइ जाग॥
मन दीन्हों मोको तब लीन्हों,
मन लैहो मैं जाउ।
सूरस्याम ऐसी जनि कहिये,
हम यह कही सुभाउ॥

(४६)

राग बागेश्री

मो सम पतित न और गुसाईं!
औगुन मोते अजहुं न छूटत,
भली तजी अब ताईं॥
जनम-जनम योंही भ्रमि आयो,
कपि-गुंजाकी नाईं।

परसत सीत जात नहिं क्योंहू,
लै लै निकट बनाई ॥
मोह्यो जाइ कनक-कामिनिसों,
ममता मोह बढ़ाई ।
रसना स्वादु मीन ज्यों उरझी,
सूझत नहिं फंदाई ॥
सोवत मुदित भयो सुपनेमें,
पाई निधि जो पराई ।
जागि पर्‍यो कछु हाथ न आयो,
यह जगकी प्रभुताई ॥
परसे नाहिं चरन गिरिधरके,
बहुत करी अनिआई ।
सूर पतितकों ठौर और नहिं,
राखि लेहु सरनाई ॥

(४७)

राग आसावरी

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं।
ता दिन तेरे तन-तरुवरके,
सबै पात झरि जैहैं॥
घरके कहैं वेगि ही काढ़ो,
भूत भये कोउ खैहैं।
जा प्रीतमसों प्रीति घनेरी,
सोऊ देखि डरैहैं॥
कहं वह ताल, कहां वह सोभा,
देखत धूरि उड़ैहैं।
भाइ-बन्धु अरु कुटुंब-कबीला,
सुमिरि-सुमिरि पछितैहैं॥
बिनु गोपाल कोउ नहिं अपनो,
जसु-अपजसु रहि जैहैं।

जो सूरज दुर्लभ देवनको,
सो सतसंगति पैहैं ॥

(४८)

राग वागेश्री

जो हम भले बुरे तौ तेरे।
तुम्हैं हमारी लाज बड़ाई,
विनती सुनु प्रभु मेरे ॥
सब तजि तुव सरनागत आयो,
निज कर चरन गहेरे।
तुव प्रताप-बल बदत न काहू,
निडर भये घर चेरे ॥
और देव सब रङ्क भिखारी,
त्यागे बहुत अनेरे।
सूरदास प्रभु तुमरि कृपातें,
पाये सुख जु घनेरे ॥

(४६)

राग आसावरी

करी गोपालकी सब होई।

जो अपनो पुरुषारथ मानत,

अति झूठो है सोई॥

साधन मंत्र यंत्र उद्यम बल,

यह सब डारहु धोई।

जो कछु लिखि राखी नँदनन्दन,

मेटि सकै नहिं कोई॥

दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम,

कतहिं मरत हौ रोई।

सूरदास स्वामी करुनामय,

स्याम चरन मन पोई॥

(५०)

राग खमाच

अब तो प्रगट भई जग जानी।

वा मोहनसों प्रीति निरंतर,
क्यों निवहेगी छानी॥

कहा करौं सुन्दर मूरत इन,
नयननि मांझि समानी।

निकसत नाहिं बहुत पचिहारी,
रोम रोम अरुझानी॥

अब कैसे निर्वारि जाति है,
मिले दूध ज्यों पानी।

सूरदास प्रभु अन्तरजामी,
उर अन्तरकी जानी॥

(५१)

राग सारंग

हरि हौं सब पतितनको राव।

को करि सकै बराबरि मेरी,

सो तौं मोहि बताव॥

व्याध गीध अरु पतित पूतना,

तिनमें बढि जो और।

तिनमें अजामिल गणिका पति,

उनमें मैं सिरमौर॥

जहँ तहँ सुनियत यहै बड़ाई,

मो समान नहिं आन।

अब रहे आजु कालिके राजा,

मैं तिन मेंसुलतान॥

अबलौं तो तुम बिरद बुलायो,

भई न मोसों भेट॥

तजौ बिरद कै मोहिं उधारो,

सूर गही कसि फेंट ॥

(५२)

राग सारंग

काहूके कुल तन न विचारत ।

अविगतकी गति कहि न परतु है,

व्याध अजामिल तारत ॥

कौन धों जाति औरप्रीति विदुरकी

ताहीके प्रभु धारत ।

भोजन करत दुष्ट घर उनके,

राज मान भँगठारत ॥

ऐसे जना करमके ओछे,

ओछे ही अनुसारत ।

यहै सुभाव सूरके प्रभुको,

भक्तवछल प्रण पारत ॥

(५३)

राग आसावरी

ताते तुमरो भरोसो आवै ।

दीनानाथ पतितपावन यस,
वेद उपनिषद् गावै ॥

जो तुम कहौ कौन खल तारयो,
तौ हौं बोलौं साखी ।

पुत्रहेतु हरिलोक गयो द्विज,
सक्यो न कोऊ राखी ॥

गणिका किये कौन व्रत संयम,
शुक-हित नाम पढ़ावै ।

मनसा करि सुमिरयो गज बपुरो,
ग्राह परम गति पावै ॥

(५४)

राग आसावरी

अपुनपो आपुन ही विसरयो।
जैसे स्वान कांच मन्दिरमें,
भ्रमि भ्रमि भूसि मरयो॥
हरि सौरभ मृग नाभि बसतु है,
द्रुम तृण सूंघि मरयो।
ज्यों सपनेमें रंक भूप भयो,
तस करि अरि पकरयो॥
ज्यों केहरि प्रतिविम्ब देखिकै,
आपुन कूप परयो।
ऐसे गज लखि फटिक सिलामें,
दसननि जाइ अरयो॥
मर्कट मुट्ठि छांड़ि नहिं दीनी,
घर घर द्वार फिरयो।

सूरदास नलिनीको सुवटा,
कहि कौने जकरयो।

(५५)

राग धनाश्री

सबै दिन गये विषयके हेत।
तीनौं पन ऐसे ही बीते,
केस भये सिर सेत॥
आंखिन अन्ध स्रवन नहिं सुनियत,
थाके चरण समेत।
गंगाजल तजि पियत कूप-जल,
हरि तजि पूजत प्रेत॥
रामनाम बिनु क्यों छूटोगे,
चन्द्र गहे ज्यों केत।
सूरदास कछु खरच न लागत,
रामनाम मुख लेत॥

(५६)

राग धनाश्री

नैना भये अनाथ हमारे।

मदनगोपाल यहां ते सजनी,
सुनियत दूरि सिधारे॥
वै हरि जल हम मीन बापुरी,
कैसे जिवहिं निनारे।
हम चातक चकोर स्यामल घन,
वदन सुधानिधि प्यारे॥
मधुवन बसत आस दरसनकी
नैन जोइ मग हारे॥
सूरजस्याम करी पिय ऐसी,
मृतकहुतें पुनि मारे॥

(५७)

राग मलार

रुक्मिनि मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।

वा क्रीड़ा खेलत यमुना-तट,

बिमल कदमकी छाहीं॥

गोपवधूकी भुजा कंठ धरि,

बिहरत कुंजन माहीं।

अमित बिनोद कहां लौं बरनौं,

मो मुख बरनि न जाहीं॥

सकल सखा अरु नंद जसोदा,

वे चितते न टराहीं।

सुत हित जानि नंद प्रतिपाले,

बिछुरत बिपति सहाहीं॥

यद्यपि सुखनिधान द्वारावति,

तोउ मन कहुं न रहाहीं।

सूरदास प्रभु कुंज-विहारी,

सुमिरि सुमिरि पछिताहीं।

(५८)

राग केदारा

देखी मैं लोचन चुवत अचेत।

मनहुं कमल ससि त्रास ईसको,

मुक्ता गनि गनि देत॥

द्वार खड़ी इक टक मग जोवत,

ऊरध स्वासन लेत।

मानहुं मदन मिले चाहति है,

मुंचत मरुत समेत॥

स्रवनन सुनत चित्र पुतरी लै,

समुझावत जित नेत।

कहुं कंकन कहुं गिरी मुद्रिका,

कहुं ताटंक कहुं नेत॥

मनहु बिरह दव जरत बिस्व सब
राधा·रुचिर निकेत।
धुजि होइ सूखि·रही सूरज-प्रभु
बँधी तुम्हारे हेत॥

(५६)

अब मैं नाच्यौं बहुत गुपाल॥
काम क्रोधको पहिरि चोलना,
कंठ विषयकी माल॥१॥
महा मोहके नूपुर बाजत,
निन्दा शब्द रसाल।
भरम भरयो मन भयो पखावज,
चलत कुसंगत चाल॥२॥
तृष्णा नाद करत घट भीतर,
नाना विधि दै ताल।
मायाको कटि फेंटा बांध्यो,
लोभ तिलक दियो भाल॥३॥

कोटिक कला कांछि देखराई,

जल थल सुधि नहिं काल।

सूरदासकी सबै अविद्या,

दूरि करो नँदलाल ॥४॥

(६०)

राग सारङ्ग

तुम हरि सांकरेके साथी।

सुनत पुकार परम आतुर ह्वै,

दौरि छुड़ायो हाथी ॥१॥

गर्भ परीक्षित रक्षा कीन्हीं,

वेद उपनिपद साखी।

वसन बढ़ाय द्रुपद-तनयाके,

सभा माँझ पत राखी ॥२॥

राज-रवनि गाई व्याकुल ह्वै,

दै दै सुतको धीरक।

मागध हति राजा सब छोरे,
ऐसे प्रभु पर-पीरक ॥३॥
कपट स्वरूप धर्यो जब कोकिल,
नृप प्रतीति कर मानी।
कठिन परी तबहिं प्रभु प्रगटे,
रिपु हति सब सुखदानी ॥४॥
ऐसे कहौं कहाँ लौ गुन-गन,
लिखित अन्त नहिं पइये।
कृपासिन्धु उनहीके लेखे,
मम लज्जा निरबहिये ॥५॥
सूर तुम्हारी ऐसे निबही,
संकटके तुम साथी।
ज्यों जानो त्यों करो दीनकी,
बात सकल तुम हाथी ॥६॥

(६१)

हरि हौं बड़ी वेरको ठाढ़ो।
जैसे और पतित तुम तारे,
तिनहिंनमँह लिखि काढ़ो॥१॥
जुग जुग विरद यही चलि आयो,
टेर कहत हौं ताते।
मरियत लाज पञ्च पतितनमें,
हौं धर कहो कहांते॥२॥
कै अब हार मानि कर वैठो,
कै करु विरद सही।
सूर पतित जो झूठ कहत है,
देखो खोलि वही॥३॥

(६२)

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अन्तरजामी,
करनी कछु न करी॥१॥

औगुन मोते बिसरत नाहीं,
पल छिन घरी घरी।
सब प्रपञ्चकी पोट बांध करि,
अपने सीस धरी ॥२॥
दारा-सुत-धन मोह लिये हैं,
सुधि-बुधि सब बिसरी।
सूर पतितको बेग उधारो,
अब मेरी नाव भरी ॥३॥

(६३)

राग कान्हरा

दीनानाथ अब बार तुम्हारी।
पतित उधारन बिरद जानिकै,
बिगरी लेहु सँभारी ॥१॥
बालापन खेलत ही खोयो,
युवा विषय रस माते।

वृद्ध भयो सुधि प्रगटी मोको,
दुखित पुकारत ताते ॥ २॥

सुतनि तज्यो, तिय तज्यो भ्रात, तजि
तनु त्वच भई जु न्यारी।
स्रवन न सुनत चरनगति थाकी,
नैन भये जल धारी ॥ ३ ॥

पलित केस कफ-कंठ विरोध्यौ,
कल न परी दिन राती।
माया मोह न छाँड़ै तृष्णा
ए दोऊ दुखदाती ॥ ४ ॥

अब या व्यथा दूरि करिबैको,
और न समरथ कोई।
सूरदास प्रभु करुणासागर
तुमते. होइ सु होई ॥ ५ ॥

(६४)

राग सारंग

नाथ मोहिं अबकी बेर उबारो ॥

तुम नाथनके नाथ सुवामी,
दाता नाम तिहारो।
करमहीन जनमको अन्धो,
मोतें कौन नकारो ॥ १ ॥
तीन लोकके तुम प्रतिपालक,
मैं हूं दास तिहारो।
तारी जाति कुजाति श्याम तुम,
मोपर किरपा धारो ॥ २ ॥
पतितनमें इक नायक कहिये,
नीचनमें सरदारो।
कोटि पाप इक पासँग मेरे,
अजामिल कौन बिचारो ॥ ३ ॥

नाठो धरम नाम सुनि मेरो,
नरक दियो हठि तारो।
मोको ठौर नहीं अब कोऊ,
अपनो विरद सम्हारो॥ ४॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति,
अब न करो जिय गारो।
सूरदास साचो तब माने,
जो ह्वै मम निस्तारो॥ ५॥

(६५)

राग काफी

अबकी टेक हमारी।
लाज राखो गिरधारी॥
जैसी लाज रखी पारथकी,
भारत युद्ध मँझारी।
सारथि होके रथको हांको,
चक्र सुदर्शन-धारी॥

भक्तकी टेक न टारी ॥ अबकी० ॥१॥
जैसी लाज रखी द्रौपदिकी,
होन न दीन्हीं उघारी।
खैंचत खैंचत दोउ भुज थाके,
दुःशासन पचिहारी ॥
चीर बढ़ायो मुरारी ॥ अबकी० ॥२॥
सूरदासकी लज्जा राखो,
अब को है रखवारी।
राधे-राधे श्रीवर-प्यारी,
श्रीवृषभानु-दुलारी।
शरण तकि आयो तुम्हारी ॥ अबकी० ॥३॥

(६६)

राग आसा

दीनन दुखहरन देव,
सन्तन सुखकारी ॥१॥

अजामील गीध व्याध,
इनमें कहो कौन साध,
पञ्छीहू पद पढ़ात,
गनिकासी तारी ॥२॥

ध्रुवके सिर छत्र देत,
प्रह्लादको उबार लेत,
भक्त हेत बांध्यो सेत,
लंकपुरी जारी ॥३॥

तन्दुल देत रीझ जात,
सागपातसों अघात,
गिनत नहीं जूँठे फल,
खाटे-मीठे-खारी ॥४॥

गजको जब ग्राह ग्रस्यो,
दुःशासन चीर खस्यो,
सभा बीच कृष्ण कृष्ण,
द्रौपदी पुकारी ॥५॥

इतनेमें हरि आइ गये,

बसनन आरूढ भये,

सूरदास द्वारे ठाढ़ो,

आँधरो भिखारी ॥६॥

(६७)

राग आसावरी

मोसम कौन कुटिल खल कामी।

जिन तनु दियो ताहि बिसरायो,

ऐसो नमकहरामी ॥१॥

भरि भरि उदर विषयको धायो,

जैसे सूकर-ग्रामी।

हरिजन छाँड़ि हरी-बिमुखनकी,

निसिदिन करत गुलामी ॥२॥

पापी कौन बड़ो जग मोते,

सब पतितनमें नामी।

सूर पतितको ठौर कहाँ है,
तुम बिनु श्रीपति स्वामी ॥३॥

(६८)

राग भैरवी

सुने री मैंने निर्बलके बल राम।
पिछली साख भरूं सन्तनकी,
अड़े सँवारे काम ॥ १ ॥
जबलगि गज बल अपनो बरत्यो,
नेक सरथो नहिं काम।
निर्बल ह्वै बल राम पुकारयो,
आये आधे नाम ॥ २ ॥
द्रुपद-सुता निर्बल भइ ता दिन,
तजि आये निज धाम।
दुःशासनकी भुजा थकित भई,
बसनरूप भये श्याम ॥ ३ ॥

अप-बल तप-बल और बाहु-बल,
चौथो है बल दाम।
सूर किसोर-कृपातें सब बल,
हारेको हरि-नाम ॥ ४ ॥

(६६)

, तुम तजि और कौन पै जाऊँ।
काके द्वार जाइ सिर नाऊँ,
परहथ कहां बिकाऊँ ॥१॥
ऐसो को दाता है समरथ,
जाके दये अघाऊँ।
अन्तकाल तुमरो सुमिरन गति,
अनत कहूं नहिं पाऊँ ॥२॥
रङ्क अयाची कियो सुदामा,
दियो अभयपद ठाऊँ।

कामधेनु चिन्तामनि दीनों,
कलप-वृच्छ तर छाऊँ ॥३॥
भवसमुद्र अति देखि भयानक,
मनमें अधिक डराऊँ
कीजै कृपा सुमिरि अपनो प्रन,
सूरदास बलि जाऊँ ॥४॥

(७०)

अब कैसे दूजे हाथ बिकाऊँ।
मन-मधुकर कीनों वा दिनतें,
चरन-कमल निज ठाऊँ ॥१॥
जो जानों औरै कोउ कर्त्ता,
तऊ न मन पछिताऊँ।
जो जाको सोई सो जानै,
अघतारन नर नाऊँ ॥२॥
या परतीति होय या युगकी,
परमित छूटत डराऊँ।

सूरदास प्रभु सिन्धु-चरन तजि,

नदी-सरन कत जाऊँ ॥३॥

(७१)

राग सारंग

कृपा अब कीजिये बलि जाउँ ॥

नाहिं मेरे और कोउ बलि-

चरण-कमल बिन ठाउँ ॥१॥

हौं असौच अकृत अपराधी,

सन्मुख होत लजाउँ ।

तुम कृपालु करुणानिधि केसव,

अधम-उधारन नाउँ ॥२॥

केहिके द्वार जाइहौं ठाढ़ो,

देखत काहि सुहाउँ ।

असरण-सरण नाम तुमरो, हौं,

कामी कुटिल सुभाउ ॥३॥

(७२)

काया हरिके काम न आई।
भाव भगति जहं हरि-यश सुनयो,
तहां जात अलसाई ॥ १ ॥
लोभातुर ह्वै काम मनोरथ
तहां सुनत उठि धाई।
चरन-कमल सुन्दर जहँ हरिको
क्योंहूं न जात नवाई ॥ २ ॥
जबलगि श्याम अंग नहिं परसत
आंखें जोग रमाई।
'सूरदास' भगवन्त भजन बिनु,
विषय परम विष खाई ॥ ३ ॥

(७३)

राग आसावरी

दुहुनमहं एकौ तौ न भई।
ना हरि भजे, न गृह-सुख पाये
वृथा बिहाय गई ॥१॥

ठानी हुती और कछु मनमें
औरे आनि भई।
अविगत गति कछु समुझि परत नहिं
जो कुछ करत दई ॥२॥
सुत-सनेह तिय सकल कुटुंब मिलि
निसि दिन होत खई।
पद-नख-चंद-चकोर विमुख मन
खाक अँगार भई ॥३॥
विषय विकार दवानल उपजी,
मोह बयार वई।
भ्रमत भ्रमत बहुते दुख पायो
अजहुं न टेव गई ॥४॥
कहा होत अबके पछिताने
होती सिर बितई।
सूरदास सेये न कृपानिधि
जो सुख सकल मई ॥५॥

(७४)

राग सारंग

जो तू रामनाम चित धरतौ।
अबको जन्म आगिलो तेरो
दोऊ जन्म सुधरतौ ॥१॥
यमको त्रास सबै मिटि जातो,
भक्त नाम तेरो परतौ।
तन्दुल घिरत संवारि श्यामको
संत परोसो करतौ ॥२॥
होतो नफा साधुकी संगति,
मूल गांठते टरतौ।
सूरदास वैकुण्ठ पैठमें
कोऊ न फैंट पकरतौ ॥३॥

(७५)

सो रसना जो हरिगुण गावै।
नैननको छबि यहै चतुरता,
ज्यों मकरन्द मुकुन्दहि ध्यावै ॥१॥

निर्मल चित्त तौ सोई सांचो,
कृष्ण बिना जिय और न भावै।
स्रवननकी जु यहै अधिकाई,
सुनि हरि-कथा सुधारस प्यावै ॥२॥
कर तेई जो श्यामहिं सेवैं,
चरननि चलि वृन्दावन जावै।
सूरदास जैये बलि ताके,
जो हरिजू सों प्रीति बढ़ावै ॥३॥

(७६)

सोई भलो जो रामहिं गावै।
श्वपच प्रसन्न होइ बड़ सेवक,
बिनु गुपाल द्विज जन्म न भावै ॥१॥
वादविवाद यज्ञ व्रत साधै,
कतहूं जाइ जन्म डहकावै।

होइ अटल जगदीश-भजनमें,

सेवा तासु चारि फल पावै।२।

कहुँ ठौर नहिं चरण-कमल बिनु,

भृंगी ज्यों दसहू दिशि धावै।

सूरदास प्रभु संत-समागम,

आनंद अभय निशान बजावै।३।

(७७)

जय ते रसना राम कह्यो।

मानों धर्म साधि सब बैठ्यो,

पढ़िवेमें धौं कहा रह्यो ॥१॥

प्रगट प्रताप ज्ञान गुरु गमते,

दधि मथि लैकर तज्यो मह्यो।

सारको सार सकल सुखको सुख,

हनुमान शिव जानि कह्यो ॥२॥

नाम प्रतीति भई जा जनकी,
लै आनँद दुख दूरि दह्यो।
सूरदास धनि धनि ते प्राणी,
जे हरिको व्रत लै निबह्यो ॥३॥

(७८)

राग विहाग

जो जन कबहुंक हरिको जांचै।
आन प्रसंग उपासन छांड़ै,
मन-वच-क्रम अपने उर सांचै॥१॥
निसि दिन श्याम सुमिरि गुन गावै,
कल्पन मेटि प्रेमरस पाचै।
यह व्रत धरै लोकमें विचरै,
सम करि गनै यहै मणि काचै॥२॥
शीत उष्ण सुख दुख नहिं मानै,
हानि भये कछु सोच न राचै।

जाइ समाइ सूर वा निधिमें,

बहुरि न उलटि जगतमें नाचै ॥३॥

(७६)

(राग आसावरी)

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान ।

छूटि गये कैसे जन जीवत,

ज्यों पानी बिनु प्रान ॥१॥

जैसे मगन नाद सुनि सारंग,

बधत बधिक तनु बान ।

ज्यों चितवे शशि ओर चकोरी,

देखत ही सुख मान ॥२॥

जैसे कमल होत परिफूलित,

देखत दरसन भान ।

सूरदास प्रभु हरि-गुण मीठे,

नित प्रति सुनियत कान ॥३॥

(८०)

सबै दिन नहिं एकसे जात।
सुमिरन ध्यान कियो करि हरिको,
जब लगि तन कुसलात ॥१॥
कबहूं कमला चपला पाके,
टेढ़े टेढ़े जात।
कबहुँक मग मग धूरि टटोरत,
भोजनको बिलखात ॥२॥
या देहीके गरब बावरो,
तदपि फिरत इतरात।
बाद-बिवाद सबै दिन बीते,
खेलत ही अरु खात ॥३॥
हौं बड़ हौं बड़ बहुत कहावत,
सूधे करत न बात।

योग न युक्ति ध्यान नहिं पूजा,
बृद्ध भये अकुलात ॥४॥
बालापन खेलत ही खोयो,
तरुनापन अलसात।
सूरदास अवसरके बीते,
रहिहौ पुनि पछितात ॥५॥

(८१)

राग सारंग

जो सुख होत गोपालहिं गाये।
सो नहिं होत किये जप तपके,
कोटिक तीरथ न्हाये ॥१॥
दिये लेत नहिं चारि पदारथ,
चरन-कमल चित लाये।
तीनि लोक तृनसम करि लेखत,
नन्दनँदन उर आये ॥२॥

वंशीवट वृन्दावन यमुना,
तजि वैकुण्ठ को जाये।
सूरदास हरिको सुमिरन करि,
बहुरि न भव चलि आये ॥३॥

(८२)

राग आसावरी

अबकी राखि लेहु भगवान।
हम अनाथ बैठी द्रुम-डरियाँ,
पारधि साध्यो बान ॥१॥
ताके डर निकसन चाहत हौं,
ऊपर रह्यो सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयो कृपानिधि,
कौन उबारै प्रान ॥२॥
सुमिरत ही अहि डस्यो पारधि,
लाग्यो तीर सचान।

सूरदास गुन कहँ लग बरनौं,
जै जै कृपानिधान ॥३॥

(८३)

रे मन मूर्ख जनम गंवायो ॥

कर अभिमान विषयसों राच्यो,
नाम सरन नहिं आयो ॥ १ ॥

यह संसार फूल सेमरको,
सुन्दर देखि लुभायो ॥
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ,
हाथ कछू नहिं आयो ॥ २ ॥

कहा भयो अबके मन सोचे,
पहिले नाहिं कमायो ।
सूरदास हरि-नाम-भजन बिनु,
सिर धुनि धुनि पछितायो ॥ ३ ॥

(८४)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं।

ता दिन तेरे तनु-तरुवरके,
सबै पात झरि जैहैं॥ १॥

घरके कहि वेगहि काढ़ो,
भूत भये कोउ खेहैं।
जा प्रीतमसों प्रीति घनेरी,
सोऊ देखि डरैहैं॥ २॥

कहँ वह ताल कहां वह शोभा,
देखत धूरि उड़ैहैं।
भाई बन्धू कुटुँब कबीला,
सुमिरि सुमिरि पछितैहैं॥ ३॥

बिना गुपाल कोऊ नहिं अपनो,
जश-कीरति रहि जैहैं।

सो तो सूर दुर्लभ देवनको,
सत-संगतिमहँ पैहैं ॥ ४ ॥

(८५)

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै।

जैसे उड़ि जहाजको पञ्छी
फिरि जहाज पै आवै ॥१॥

कमल-नयनको छांड़ि महातम
और देवको ध्यावे।

परम गंगको छांड़ि पियासो
दुर्मति कूप खनावै ॥२॥

जिन मधुकर अंबुज रस चाख्यो,
क्यों करील फल खावै।

सूरदास प्रभु कामधेनु तजि,
छेरी कौन दुहावै ॥३॥

(८६)

राग खमाज

नैना ढीठ अतिही भये।
लाज लकुट दिखाइ त्रासी,
नेकहूं न तये ॥१॥
तोरि पलक कपाट घूंघट
ओट मेटि गये।
मिले हरिको जाइ आतुर
जे हैं गुण न भये ॥२॥
मुकुट कुण्डल पीतपट कटि
ललित भेप ठये।
जाइ लुब्धे निरखि वह छवि,
'सूर' नन्द-जये ॥३॥

(८७)

राग कामोद

राम भगत-वत्सल निज बानो।
जाति गोत कुल नाम गनत नहिं
रंक होय कै रानो ॥१॥

ब्रह्मादिक सिव कौन जात प्रभु
हौं अजान नहिं जानो।
महता जहाँ तहाँ प्रभु नाहीं
सो द्वैता क्यों मानो ॥२॥
प्रगट खम्भ तै दई दिखाई,
यद्यपि कुलको दानो।
रघुकुल राघो कृष्ण सदा ही
गोकुल कीनो थानो ॥३॥
बरनि न जाय भजनकी महिमा
बारम्बार बखानो।
ध्रुव रजपूत विदुर दासी-सुत
कौन कौन अरगानो ॥४॥
युग युग विरद यहै चलि आयो
भगतन हाथ बिकानो।
राजसूयमें चरण पखारे
श्याम लेय कर पानो ॥५॥

रसना एक अनेक श्याम गुण
कहँलौं करो बखानो।
सूरदास प्रभुकी महिमा है
साखी वेद पुरानो ॥६॥

(८८)

राग धनाश्री

यदुपति देखि सुदामा आये।
विह्वल विकल छीन दारिद-वश
करि प्रलाप रुक्मिणि समभाये ॥१॥
दृष्टि परेते दिये संभापन
भुजा पसारि अंक लै आये।
तन्दुल देखि बहुत दुख उपज्यो
मांगु सुदामा जो मनभाये ॥२॥
भोजन करत गह्यो कर रुक्मिणी
सोइ देहु जो मन न डुलावै।

सूरदास प्रभु नव-निधि-दाता।
जापर कृपा सोइ जन पावै॥३॥

(८६)

राग बिलावल

ऐसी प्रीतिकी बलि जाउँ।
सिंहासन तजि चले मिलनको
सुनत सुदामा नाउँ॥१॥
गुरु बान्धव अरु विप्र जानिकै
चरणन हाथ पखारे।
अंकमाल दै कुशल बूझि कै
सिंहासन बैठारे॥२॥
अरधङ्गी बूझत मोहनको
कैसे हितू तुम्हारे।
दुर्बल हीन छीन देखति हौं
पाउँ कहाँते धारे॥३॥

सन्दीपनके हम और सुदामा
पढ़े एक चटसार।
सूरश्यामकी कौन चलावै
भक्तन कृपा अपार ॥४॥

(६०)

राग धनाश्री

हरिको मिलन सुदामा आयो।
बिधि करि अरघ पाँवडे दीने
अन्तर प्रेम बढ़ायो ॥१॥
पूर्व जन्म अदात जानिकै
ताते कछुक मँगायो।
मुठिक तन्दुल बांधि कृष्णको
बनिता विनय पठायो ॥२॥
समदै विप्र सुदामा घरको
सर्वसु दै पहुँचायो।
सूरदास बलि बलि मोहनकी
तिहूं लोक पद पायो ॥३॥

(६१)

राग वागेश्री

हरि विन कौन दरिद्र हरै।
कहत सुदामा सुन सुंदरी जिय
मिलन न हरि विसरै ॥१॥
और मित्र ऐसे समयामहं
कत पहिचान करैं।
विपति परे कुशलात न बूझै,
बात नहीं उचरै ॥२॥
उठिके मिलै तन्दुल हम दीन्हें,
मोहन वचन फुरै।
सूरदास स्वामीकी महिमा,
टारी विधि न टरै ॥३॥

(६२)

हम भक्तनके भक्त हमारे।
सुन अर्जुन परतिज्ञा मोरी
यह व्रत टरत न टारे ॥१॥

भक्तन काज लाज हिय धरिके
पांय पियादे धाये।
जहँ जहँ भीर परी भक्तनमँह
तहँ तहँ होत सहाये ॥२॥
जो भक्तनसों बैर करत है
सो निज बैरी मेरो।
देख विचार भक्त हित कारन
हाँकत हों रथ तेरो ॥३॥
जीते जीत भक्त अपनेकी
हारे हार विचारों।
सूरश्याम जो भक्त विरोधी
चक्र सुदर्शन मारों ॥४॥

(६३)

राग कान्हरा

जाको मन लाग्यो नन्दलालहिं
ताहि और नहिं भावे हो ॥१॥
ज्यों गूँगो गुर खाइ अधिक रस
सुख सवाद न बतावे हो ॥२॥

जैसे सरिता मिलै सिन्धुको
बहुरि प्रवाह न आवे हो ॥३॥
ऐसे सूर कमललोचनते
चित नहिं अनत डुलावे हो ॥४॥

(६४)

राग विलावल

मुरली सुनत अचल चले।
थके चर जल झरत पाहन
विफल वृक्षन फले ॥१॥
पय स्रवत गोधननिके थन
प्रेम पुलकित गात।
झुरे द्रुम अंकुरित पल्लव
विटप चंचल पात ॥२॥
सुनत खग मृग मौन साध्यो
चित्रकी अनुहारि।
धरणि उमगि न माति धरमें
यती योग विसारि ॥३॥

ग्वाल गृह गृह सहज सोवत
उहै सहज सुभाइ।
सूर प्रभु रस रामके हित
सुखद रैनि बढाइ ॥४॥

(६५)

राग कल्याण

हौं साँवरेके संग जैहौं।
होनी होइ सु होइ उभै लै हठ
यश अपयश कतहू न डरैहौं ॥१॥
कहा रिसाइ करैगो कोऊ जो
रोकि है प्राण ताहि दैहौं।
दैहौं छांड़ि राखिहौं यह व्रत
हरि हितु बीजु बहुरिको वैहौं ॥२॥
करिहौं सूर अजर अवनीतन
मिलि अंकास पिय भौन समैहौं।

बाय बीज वापी जल क्रीड़ा
तेज मुकुर मुख सब सुख लैहौं ॥३॥

(६६)

राग रामकली

नहिं कोइ श्यामहि राखै जाइ।
सुफलक सुत बैरी भयो मोको
कहति यशोदा माइ ॥१॥
मदनगुपाल बिना घट आँगन
गोकुल काहि सुहाइ।
गोपी रही ठगी-सी ठाढ़ी
कहा ठगोरी लाइ ॥२॥
सुंदर श्याम राम भरि लोचन
बिन देखे दोउ भाइ।
सूर तिनहि लै चले मधुपुरी
हृदय शूल बढ़ाइ ॥३॥

(६७)

राग सोरठ

मोहन इतनो मोहिं चित धरिये।
जननी दुखित जानिकै कबहूं
मथुरा गमन न करिये ॥ १ ॥
यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै,
तुमहिं लेन है आयो।
तिरछे भये कर्म कृत पहिले,
विधि यह ठाठ बनायो ॥ २ ॥
बार बार जननी कहि मोसों
माखन मांगत जौन।
सूर तिनहिं लेबेको आये
करिहौ सूनो भौन ॥ ३ ॥

(६८)

राग रामकली

चलत हरि धृग जु रहत ए प्रान।

कहां वह सुख अब सहौं दुसह दुख,

उर करि कुलिस समान ॥ १ ॥

कहां वह कण्ठ श्याम-सुन्दर भुज,

करति अधर-रस पान।

अचवत नयन चकोर सुधा-विधु,

देखहु मुख छवि आन ॥ २ ॥

जाको जग उपहास कियो तब,

छांड्यो सब अभिमान।

सूर सुनिधि हम ते हैं बिछुरत,

कठिन है करम निदान ॥ ३ ॥

(६६)

राग सारंग

प्रीति करि काहू सुख न लह्यो।

प्रीति पतंग करी दीपकसों
आपै प्राण दह्यो ॥ १ ॥

अलिसुत प्रीति करी जलसुतसों
सम्पति हाथ गह्यो।

सारंग प्रीति करी जो नादसों
सन्मुख बान सह्यो ॥ २ ॥

हम जो प्रीति करी माधोसों
चलत न कछू कह्यो।

सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनो
नैनन नीर बह्यो ॥ ३ ॥

(१००)

राग सारंग

हरि बिछुरत फाट्यो न हियो।
भयो कठोर वज्रते भारी
रहिकै पापी कहा कियो ॥ १ ॥
घोरि हलाहल सुनरी सजनी
औसर तेहि न दियो।
मन सुधि गई सँभारति नाहिन
पूरो दांव अक्रूर दियो ॥ २ ॥
कछु न सुहाइ गई सुधि तबते
भवन काजको नेम लियो।
निसिदिन रटत सूरके प्रभु बिनु
मरिबो तऊ न जान जियो ॥ ३ ॥

(१०१)

प्रीति तौ मरनऊ न विचारै।
प्रीति पतङ्ग जोति पावक ज्यों,
जरत न आपु संभारै ॥ १ ॥
प्रीति कुरङ्ग नाद स्वर मोहित,
बधिक निकट ह्वै मारै।
प्रीति परेवा उड़त गगनतें,
उड़त न आपु संभारै ॥ २ ॥
सावन मास पपीहा बोलत,
पिउ पिउ करि जु पुकारै।
सूरदास प्रभु दरसन कारन,
ऐसी भांति बिचारै ॥ ३ ॥

(१०२)

ऊधो! योग योग हम नाहीं।
अबला सार ज्ञान कहा जानै,
कैसे ध्यान धराहीं ॥ १ ॥

ते य मूंदन नैन कहत हैं,
हरि मूरति जा माहीं।
ऐसी कथा कपटकी मधुकर
हमतें सुनी न जाहीं ॥ २ ॥
श्रवन चीर अरु जटा बँधावहु
ये दुख कौन समाहीं।
चन्दन तजि अँग भस्म बतावत
विरह अनल अति दाहीं ॥ ३ ॥
योगी भरमत जेहि लगि भूले,
सो तो अपुने माहीं।
सूरदास ते न्यारे न पल छिन,
ज्यों घटते परछाहीं ॥ ४ ॥

(१०३)

राग बिलावल

नाहिंन रह्यो हियमें ठौर।
नन्द-नन्दन अछत कैसे,
आनिये उर और ॥ १ ॥

चलत चितवत दिवस जागत,
स्वप्न सोवत रात।
हृदयतें वह श्याम मूरति,
छिन न इत उत जात॥२॥
कहत कथा अनेक ऊधो!
लोक लाज दिखात।
कहा करौं तन प्रेम-पूरन,
घट न सिन्धु समात॥३॥
श्याम गात सरोज आनन,
ललित गति मृदु हास।
सूर ऐसे रूप कारन,
मरत लोचन प्यास॥४॥

(१०४)

राग गौरी

कहा इन नयननको अपराध।
रसना रटत सुनत यश कांननि
इतनी अगम अगाध॥१॥

भोजन किये विनु भूख क्यों भाजै
बिन खाये सर स्वाद।
इकटक रहत छुटत नहिं कबहूं
हरि देखनकी साध ॥ २ ॥
ये दृग दुखी बिना वह मूरति
कहो कहा अब कीजै।
एक वेर व्रज आनि कृपा करि
सूर सो दरसन दीजै ॥ ३ ॥

(१०५)

राग सोरठ

लोचन हरत अम्बुज मान।
चकित मन्मथ सरन चाहत,
धनुष तजि निज बान ॥ १ ॥
चिकुर कोमल कुटिल राजत,
रुचिर बिमल कपोल।

नील नलिन सुगन्ध ज्यों रस,
थकित मधुकर लोल ॥ २ ॥
श्याम उरपर परम सुन्दर,
सजल मोतिन हार।
मनो मरकत सैलते,
बहि चली सुरसरि धार ॥ ३ ॥
सूर कटि पट-पीत राजत,
सुभग छवि नन्दलाल।
मनों कनकलता अवलि बिच,
तरल विटप तमाल ॥ ४ ॥

(२०६)

राग सोरठ

हम न भईं वृन्दावन-रेनु।
जिन चरनन डोलत नँदनन्दन
नित प्रति चारत धेनु ॥ १ ॥

हमतें धन्य परम ये द्रुम वन
बालक बच्छ अरु धेनु।
सूर सकल खेलत हंसि बोलत
ग्वालन संग मथि पीवत धेनु ॥ २ ॥

(१०७)

विराजत अंग अंग छवि बात।
अपने कर करि रच्यो विधाता
पट खग नव जलजात ॥ १ ॥
द्वै पतंग शशि बीस एक फनि
चारि विविध रंग धात।
द्वै पिक बिंब बतीस वज्रकन,
एक जलजपर थात ॥ २ ॥
इक सायक इक चाप चपल अति
चिबुकमें चित्त बिकात।
दुइ मृणाल मातुल ऊभै द्वै,

कदलि खम्भ बिनु पात ॥ ३ ॥

इक केहरि इक हंस गुप्त रह

तिनहि लयो यह गात ।

सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलनको,

अति आतुर अकुलात ॥ ४ ॥

(१०८)

राग धनाश्री

अँखिया हरि-दरशनकी भूखी ।

अब क्यों रहति श्याम रंग राती,

ए बातें सुनि रूखी ॥ १ ॥

अवधि गनत इकटक मग जोवत,

तब ए इतौं नहिं भूखी ।

इते मान इहि योग संदेशन,

सुनि अकुलानी दूखी ॥ २ ॥

सूर सकत हठ नाव चलावत,
ए सरिता हैं सूखी।
वारक वह मुख आनि देखावहु,
दुहि पै पिवत पतूखी ॥ ३ ॥

(१०६)

अँखियां हरि-दर्शनकी प्यासी।
देख्यो चाहत कमलनैनको,
निसि दिन रहत उदासी ॥ १ ॥
केसर तिलक मोतिनकी माला,
वृन्दावनके वासी।
नेह लगाय त्यागि गये तृन सम,
डारि गये गल-फाँसी ॥ २ ॥
काहूके मनकी को जानत,
लोगनके मन हाँसी।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिन,
लैहौं करवत कासी ॥ ३ ॥

(११०)

राग गूजरी

ऊधो ! इन नैनन नेम लियो ।
नन्दनँदनसों पतिव्रत राख्यो
नाहिं न दरस बियो ॥१॥
चन्द्र चकोर चित्त चातक
जलधरसों बंधो हियो ।
ऐसेहि इन नयनन गोपालहि
इक टक प्रेम दियो ॥२॥
आयो पुहुप ज्ञान ले ये दृग
मधुबन रुचि न कियो ।
हरि-मुख-कमल अमीरस सूरज
चाहत उहै पियो ॥३॥

(१११)

राग हमीर

गुरु बिनु कौन बतावे बाट,
बड़ा बिकट यम घाट ॥१॥
भ्रान्तिकी पहाड़ी नदियाँ,
बिचमहं अहंकारकी लाट ॥२॥
मद मत्सरका मेहा बरसत,
माया पवन बहै दाट ॥३॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो !
क्यों तरना यह घाट ॥४॥

(११२)

राग पीलू

इस तन धनकी कौन बड़ाई।
देखत नैनोंमें मिट्टी मिलाई॥

अपने खातर महल बनाया,

आपहि जाकर जंगल सोया ॥१॥

हाड़ जलै जैसे लकरिकी मोली,

बाल जलै जैसे घासकी पोली ॥२॥

कहत कबीर सुनो मेरे गुनिया,

आप मुवे पीछे डूब गई दुनिया ॥३॥

(११३)

राग आसावरी

काया बौरी, चलत प्रान काहे रोई ॥

काया पाय बहुत सुख कीन्हो

नित उठि मलि मलि धोई ॥१॥

सो तन छिया छार ह्वै जैहैं

नाम न लैहैं कोई ॥२॥

कहत प्रान सुनु काया बौरी

मोर तोर सङ्ग न होई।

तोहि अस मित्र बहुत हम त्यागे
सङ्ग न लीन्हा कोई ॥३॥
ऊसर खेतके कुसा मंगावै
चाँचर चवरकै पानी।
जीवत ब्रह्मको कोई न पूजै
मुरदाके महिमानी ॥४॥
सिव-सनकादि आदि ब्रह्मादिक
शेस सहसमुख होई।
जो जो जनम लियो वसुधामें
थिर न रह्यो है कोई ॥५॥
पाप पुन्य है जन्म सँघाती
समुझि देख नर लोई।
कहत कबीरा अन्तरकी गति
जानत बिरला कोई ॥६॥

(११४)

राग काफी

मन फूला फूला फिरै
जगतमें कैसा नाता रे ॥
माता कहै यह पुत्र हमारा,
बहिन कहै बिर मेरा।
भाई कहै यह भुजा हमारी,
नारि कहै नर मेरा ॥ १ ॥
पेट पकरिके माता रोवै,
बाहिं पकरिके भाई।
लपटि झपटिके तिरिया रोवै,
हंस अकेला जाई ॥ २ ॥
जबलगि जीवै माता रोवै,
बहिन रोवै दस मासा।
तेरह दिन तक तिरिया रोवै,
फेरि करै घरवासा ॥ ३ ॥

चार गजी चरगजी मंगाया,
चढ़ा काठकी घोड़ी।
चारों कोने अगिनि लगाई,
फूंक दियो जस होरी ॥ ४ ॥
हाड़ जरै जस लाह कड़ीको,
केस जरै जस घासा।
सोना ऐसी काया जर गइ,
कोइ न आयो पासा ॥ ५ ॥
घरकी तिरिया ढूंढ़न लागी,
ढूंढ़ फिरी चहुं पासा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो !
छाड़ो जगकी आसा ॥ ६ ॥

(११५)

राग काफ़ी

तोरी गठरीमें लागे चोर,
बटोहिया का सोवै ॥ टेक ॥

पांच पचीस तीन है चुरवा,
यह सब कीन्हा सोर ॥
जागु सबेरा बाट अनेड़ा,
फिर नहिं लागै जोर ॥ १ ॥
भवसागर इक नदी बहतु है,
बिन उतरे जाब बोर ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो !
जागत कीजे भोर ॥ २ ॥

(११६)

कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो ॥ टेक ॥
चन्दन काठकै बनल खटोलना,
तापर दुलहिन सूतल हो ॥१॥
उठो री सखी मोरी मांग संवारो,
दुलहा मोसे रूठल हो ॥२॥
आये जमराज पलंग चढ़ि बैठे,
नैनन आंसू टूटल हो ॥३॥

चारि जने मिलि खाट उठाइन,

चहुँ दिसि धू धू ऊठल हो ॥४॥

कहत कबीर सुनो भाई साधो !

जगसे नाता छूटल हो ॥५॥

(१२७)

राग सारंग

अब कोइ खेतियां मन लावै ॥

ज्ञान कुदार ले बंजर गोड़ै,

नामको बीज बोवावै ।

सुरत सरावन जप कर फेरै,

ढेला रहन न पावै ॥१॥

मनसा खुरपी खेत निरावै,

दूब बचन नहिं पावै ।

कोस पचीस इक बथुवा नीचे,

जलसे खोदि बहावै ॥२॥

काम क्रोधके बैल बने हैं,
खेत चरनको आवै।
सुरत लकुरिया ले फटकारै,
भागत रहा न पावै ॥३॥
उलटि पलटिके खेतको जोतै,
पूर किसान कहावै।
कहै कबीर सुनो भाई साधो!
जब वा घरको पावै ॥४॥

(१२८)

राग बिलावल

रहना नहिं देश बिराना है।
यह संसार कागदकी पुड़िया,
बूंद पड़े घुल जाना है ॥१॥
यह संसार काँटकी बाड़ी,
उलझ पुलझ मरि जाना है ॥२॥

यह संसार झाड़ औ झाँखर,
आग लगे बरि जाना है ॥३॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो !
सतगुरु नाम ठिकाना है ॥४॥

(११९)

राग बागेश्री

बीत गये दिन भजन बिनारे !
बाल अवस्था खेल गंवायो,
जब जवानि तब मान घनारे ॥१॥
लाहे कारन मूल गँवायो,
अजहुं न मिटी मनकी तृसनारे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो !
पार उतर गये सन्त जनारे ॥२॥

(१२०)

राग सारंग

माया महा ठगिनि हम जानी।
तिरगुन फाँस लिये कर डोलै
बोलै मधुरी बानी ॥१॥

केशवके कमला ह्वै बैठी,
शिवके भवन भवानी ।
पण्डाके मूरत ह्वै बैठी,
तीरथमें भई पानी ॥
योगीके योगिन ह्वै बैठी,
राजाके घर रानी ।
काहूके हीरा ह्वै बैठी,
काहूके कौड़ी कानी ॥
भक्तनके भक्तिन ह्वै बैठी,
ब्रह्माके ब्रह्मानी ।
कहै कबीर सुनो हो सन्तो !
यह सब अकथ कहानी ॥

(१२१)

मैं केहि समुझावों सब जग अन्धा ।
इक दुइ होय उन्हैं समुझावों,
सबहि भुलाना पेटके धन्धा ॥

पानीके घोड़ा-पवन असवरवा,

ढरकि परै जस ओसके बून्दा ॥१॥

गहिरी नदिया अगम बहै धरवा,

खेवनहाराके पड़िगा फन्दा ॥

घरकी वस्तु नजर नहिं आवत,

दियना बारिके ढूंढ़त अन्धा ॥२॥

लागी-आग सकल बन जरिगा,

बिनु गुरु ज्ञान भटकिगा बन्दा ॥

कहै कबीर सुनो भाई साधो!

इक दिन जाय लंगोटी-झार बन्दा ॥३॥

(१२२)

रे! तोहे पीव मिलेंगे, घूंघटका पट खोल।

घट घटमें वह साईं रमता,

कटुक वचन मत बोल ॥१॥

धन जोबनको गरव न कीजै,
भूठा पचरँग चोल।
सुन्न महलमें दियना बारिलै,
आसनसों मत डोल ॥२॥
जोग जुगुतसों रङ्गमहलमें,
पिय पायो अनमोल।
कहै कबीर अनन्द भयो है,
बाजत अनहद ढोल ॥३॥

(१२३)

राग भैरवी

झीनी झीनी बीनी चदरिया।
काहेकै ताना काहेकै भरनी,
कौन तारसे बीनी चदरिया ॥१॥
इंगला पिंगला ताना भरनी,
सुखमन तारसे बीनी चदरिया ॥२॥

आठ कंचल दल चरखा डोलै,
पाँच तत्त गुन तीनी चदरिया ॥३॥
साईंको सियत मास दस लागै,
ठोक ठोकके बीनी चदरिया ॥४॥
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ै,
ओढ़िके मैली कीनी चदरिया ॥५॥
दास कबीर जतनसे ओढी,
ज्योंकी त्यों धर दीनी चदरिया ॥६॥

(१२४)

राग खमाज़

भजो रे भैया राम गोविन्द हरी !
जप तप साधन कछु नहिं लागत,
खरचत नहिं गठरी ॥१॥
संतत सम्पत सुखके कारन,
जासों भूल परी ॥२॥

कहत कबीरा जा मुख राम नहिं,

वह मुख धूल भरी ॥ ३ ॥

(१२५)

राग केदार

तू तो राम सुमर जग लड़वा दे ॥

कोरा कागजकी काली स्याही,

लिखत पढ़त वाको पढ़वा दे ॥१॥

हाथि चलत है अपने गतमें,

कुतर भुकत वाको भुकवा दे ॥२॥

कहत कबीर सुनो भाई साधो,

नरक पचत वाको पचवा दे ॥३॥

(१२६)

जो जन लेहिं खसमका नाउं,

तिनके सद बलिहारी जाउं ॥१॥

जो गुरुके निर्मल गुन गावै,
सो भाई मेरे मन भावै ॥२॥
जेहिं घट नाम रह्यो भरपूर,
तिनकी पग-पंकज हम धूर ॥३॥
जाति जुलाहा मतिका धीर,
सहज सहज गुन लेहि कबीर ॥४॥

(१२७)

राग बिलावल

मोहे लगि गये बान सुरंगी हो ॥ टेक ॥
धन सतगुरु उपदेश दियो है,
होइ गयो चित्त भिरंगी हो ॥१॥
ध्यान पुरुषकी बनी है तिरिया,
घायल पांचों संगी हो ॥२॥
घायलकी गति घायल जानै,
क्या जानै जाति पतंगी हो ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो,
निसि दिन प्रेम उमंगी हो ॥४॥

(१२८)

राग काफी

नैहरवा हमकाँ न भावै ॥ टेक ॥

साईं की नगरी परम अति सुन्दर,

जहँ कोइ जाय न आवै ।

चाँद सुरज जहँ पवन न पानी,

को सँदेश पहुंचावै ॥

दरद यह साईं को सुनावै ॥ १ ॥

आगे चलौं पन्थ नहिं सूझै,

पीछे दोष लगावै ।

केहि विधि ससुरे जाउं मोरी सजनी,

बिरहा जोर जनावै ॥

विषैरस नाच नचावै ॥ २ ॥

बिन सतगुरु अपनो नहिं कोई,

जो यह राह बतावै ।

कहत कवीर सुनो भाई साधो,
सुपने न पीतम पावै ॥
तपन यह जियकी वुझावै ॥ ३ ॥

(१२६)

राग विलावल

मन मस्त हुआ तव क्यों वोलै ॥ टेक ॥

हीरा पायो गाँठ गठियायो,
वार वार वाको क्यों खोलै ॥ १ ॥

हलकी थी जव चढ़ी तराजू,
पूरी भई तव क्यों तोलै ॥ २ ॥

सुरत कलारी भइ मतवारी,
मदवा पी गई विन तोलै ॥ ३ ॥

हंसा पाये मानसरोवर,
ताल-तलैया क्यों डोलै ॥ ४ ॥

तेरा साहिव है घटमांही,
बाहर नैना क्यों खोलै ॥ ५ ॥

कहत कबीर सुनो भाई साधो,

साहिब मिल गये तिल ओलै ॥ ६ ॥

(१३०)

मन लागो मेरो यार फकीरीमें ॥ टेक ॥

जो सुख पावों नाम भजनमें,

सो सुख नाहिं अमीरीमें ॥ १ ॥

भला बुरा सबको सुनि लीजै,

कर गुजरान गरीबीमें ॥ २ ॥

प्रेम-नगरमें रहनि हमारी,

भगति बनि आई सबूरीमें ॥ ३ ॥

हाथमें कूंडी बगलमें सोंटा,

चारो दिसा जगीरीमें ॥ ४ ॥

आखिर यह तन खाक मिलैगा,

कहा फिरत मगरूरीमें ॥ ५ ॥

कहै कबीर सुनो भाई साधो,

साहिब मिलै सबूरीमें ॥ ६ ॥

(१३१)

राग काफी

आई गवनवाँकी सारी,
उमिरि अवहीं मोरि वारी। टेक।
साज समाज पिया लै आये,
और कहरिया चारी।
वम्हना वेदरदी अँचरा पकरिकै,
जोरत गँठिया हमारी॥
सखी सव पारत गारी॥१॥
विधि गति बाम कछु समुझि परत ना,
वैरी भई महतारी।
रोय रोय अँखियाँ मोरि पोंछत,
घरवासे देत निकारी॥
भई सवको हम भारी॥२॥

गौन कराय पिया लै चालै,
इत उत बाट निहारी।
छूटत गाँव नगरसों नाता,
छूटै महल अटारी॥
कर्म गति टरै न टारी॥३॥
नदिया किनारे बलम मोर रसिया,
दीन्ह घूंघट पट टारी।
थरथराय तनु काँपन लागे,
काहू न देख हमारी॥
पिया लै आये गोहारी॥४॥
कहै कबीर सुनो भई साधो,
यह पद लेहु विचारी।
अब के गौना बहुरि नहिं औना,
करिलै भेंट अंकवारी॥
एक बेर मिल ले प्यारी॥५॥

(१३२)

गज़ल

हमन है इश्क मस्ताना
हमनको होशियारी क्या?
रहैं आजाद या जगमें,
हमन दुनियासे यारी क्या? ॥१॥
जो बिछुड़े हैं पियारेसे,
भटकते दर-बदर फिरते।
हमारा यार है हममें,
हमनको इन्तज़ारी क्या? ॥२॥
खलक सब नाम अपनेको,
बहुत कर सर पटकता है।
हमन हरि-नाम सांचा है,
हमन दुनियासे यारी क्या? ॥३॥
न पल बिछुड़े पिया हमसें,
न हम बिछुड़ें पियारेसे।

उन्हींसे नेह लागी है,
हमनको बेकरारी क्या ? ॥४॥
कबीरा इश्कका माता,
दुईको दूर कर दिलसे।
जो चलना राह नाजुक है,
हमन सर बोझ भारी क्या ? ॥५॥

(१३३)

राग काफी

या बिधि मनको लगावै,
मनके लगाये प्रभु पावै ॥ १ ॥
जैसे नटवा चढ़त बाँसपर,
ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरे सिर ऊपर,
सुरति बरतपर लावै॥२॥

जैसे भुवंगम चरत बनहिंमें,
ओस चाटने आवै।
कबहुं चाटै कबहुं मनि तन चितवै,
मनि तजि प्रान गंवावै ॥३॥
जैसे कामिनि भरे कूप जल,
कर छोड़े बंतरावै।
अपना रंग सखियन संग राचै,
सुरति गगरपर लावै ॥४॥
जैसे सती चढ़ी सत ऊपर,
अपनी काया जरावै।
मातु पिता सब कुटुंब तियागै,
सुरति पिया घर लावै ॥५॥
धूप दीप नैवेद्य अरगजा,
ज्ञानकी आरत लावै।

कहैं कबीर सुनो भाई साधो,
फेर जन्म नहिं पावै ॥ ६ ॥

(१३४)

राग काफी

कौन मिलावै मोहिं जोगिया हो,
जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥ टेक ॥

हौं हिरनी पिय पारधी हो,
मारे सबद्के बान ।
जाहि लगी सरे जान ही हो,
और दरद नहिं जान ॥ १ ॥

मैं प्यासी हौं पीवकी हो,
रटत सदा पिव पीव ।
पिया मिलै तो जीव है,
नातो सहजै त्यागौं जीव ॥ २ ॥

पिय कारन पियरी भई हो,
लोग कहै तन रोग ।

छः छः लांघन मैं कियारे,
पिया मिलनके जोग ॥ ३ ॥
कह कबीर सुनु जोगिनी हो,
तनमें मनहिं मिलाय ।
तुम्हरी प्रीतिके कारने हो,
बहुरि मिलहिंगे आय ॥ ४ ॥

(१३५)

राग सारंग

धुबिया जल बिच मरत पियासा ॥टेक॥
जलमें ठाढ़ पियै नहिं मूरख,
अच्छा जल है खासा ।
अपने घरकै मरम न जानै,
करै धुबियनकै आसा ॥१॥
छिनमें धुबिया रोवै धोवै,
छिनमें होय उदासा ।

आपै बँधै करमकी रस्सी,

आपन गरकै फाँसा ॥२॥

सच्चा साबुन लेहि न मूरख,

है सन्तनके पासा।

दाग पुराना छूटत नाहीं,

धोवत बारह मासा ॥३॥

एक रातिको जोरि लगावै,

छोरि दिये भरि मासा।

कहै कबीर सुनो भाई साधो,

आछत अन्न उपासा ॥४॥

(१३६)

मन तूं थकत थकत थकि जाई।

बिन थाके तेरो काज न सरिहैं,

फिर पाछे पछिताई ॥१॥

जबलग तोकर जीव रहतु है,

तबलग परदा भाई।

टूटि जाय और निलुकार्सी,

रसक गहैं ठहराई ॥२॥

सकल तेज नज होय नपुंसक,

यह मति सुनि ले मेरी।

जीवत मिरतक दसा विचारैं,

पावैं वस्तु घनेरी ॥३॥

याके परे और कछु नाहीं,

यह मति सबसे पूरा।

कहै कबीर मान मन चञ्चल,

हो रहु जैसे धूरा ॥४॥

(१३७)

मोरा पिया बसै कौन देस हो।

अपने पियाके ढूंढ़न हम निकसी

कोई न कहत सँदेस हो॥ १॥

पिय कारन हम भई हैं बावरी,

धर जोगिनियाँके भेस हो।

ब्रह्मा विष्णु महेश न जाने,

का जाने सारद शेस हो॥ २॥

धनि जो अगम अगोचर पइलन,

हम सब सहत कलेस हो।

उहाँके हाल कबीर गुरू जानैं

आवत जात हमेस हो॥ ३॥

(१३८)

साहिब बूड़त नाव अब मोरी ॥ टेक ॥

काम क्रोधकी लहर उठतु है,

मोह पवन झकझोरी ।

लोभ भौंरे हिरदे घुमरतु है,

सागर वार न पारी ॥ १ ॥

कपटकी भंवर परतु है बहुतै,

वामें बेड़ा अटको ।

फाँसी काल लिये है ढारे,

आया सरन तुम्हारी ॥ २ ॥

धरमदासपर दाया कीन्ही,

काटि फन्द जिव तारी ।

कहै कबीर सुनो हो धर्मन,

सतगुरु सरन उबारी ॥ ३ ॥

(१३६)

राग बिलावल

नहिं ऐसो जनम बारंबार।
क्या जानूं कछु पुन्य प्रगटे,
मानुषा अवतार॥१॥
बढ़त पल पल घटत छिन छिन,
चलत न लागै बार।
बिरछके ज्यों पात टूटे,
लगे नहिं पुनि डार॥२॥
भवसागर अति जोर कहिये,
विषम ओखी धार।
सुरतका नर बांध बेड़ा,
वेग उतरो पार॥३॥
साधु सन्ता ते महन्ता,
चलत कहत पुकार।

दासि मीरां लाल गिरधर,
जीवना दिन चार ॥ ४ ॥

(१४०)

राग आसावरी

यहि विधि भक्ति कैसे होय ॥

हियतें मनकी मैल न छूटी,
दियो तिलक सिर धोय ॥ १ ॥

काम कूकर लोभ डोरी,
बांधि मोहिं चँडाल ।
क्रोध कसाई रहत घटबिच,
कैसे मिले गोपाल ॥ २ ॥

बिलार बिषया लालची रे,
ताहि भोजन देत ।
दीन हीन ह्वै छुधारत सो,
राम नाम न लेत ॥ ३ ॥

आपहि आप पुजायके रे,
फूले अँग न समात ।

अभिमान टीला किये बहु कहु,
जल कहां ठहरात ॥ ४ ॥
जो तेरे अन्तरकी जानै,
तासों कपट न बनै।
हिरदे हरिको नाम न आवै,
हाथ मनियाँ गनै ॥ ५ ॥
हरी हितुसे हेतु कर,
संसार आसा त्याग।
दासि मीरा लाल गिरधर,
सहज कर वैराग ॥ ६ ॥

(१४१)

राग भैरवी

मेरे तो गिरधर-गुपाल
दूसरो न कोई ॥ टेक ॥
जाके सिर मोर मुकुट,
मेरो पति सोई ॥

तात मात भ्रात बन्धु,
आपनो न कोई ॥ १ ॥
छाँड़ दई कुलकी कान,
का करिहैं कोई ॥
संतन ढिग बैठि बैठि,
लोक-लाज खोई ॥ २ ॥
चुनरीके किये टूक,
ओढ़ लीन्हि लोई ॥
मोती मूंगे उतार,
बन माला पोई ॥ ३ ॥
अँसुवन जल सींच सींच
प्रेम वेलि बोई ॥
अब तो बेल फैल गई,
होनी हो सो होई ॥ ४ ॥
दूधकी मथनिया बड़े
प्रेमसे बिलोई ॥

माखन जब काढ़ि लियो
छाछ पिये कोई ॥ ५ ॥
आई मैं भक्ति काज
जगत देख मोही ॥
दासि मीरा गिरधर प्रभु,
तारो अब मोही ॥ ६ ॥

(१४२)

प्यारे दरसन दीज्यो आय,
तुम बिन रह्यो न जाय ॥टेक॥
जल बिन कमल चन्द बिन रजनी,
ऐसे तुम देख्यां बिन सजनी।
आकुल व्याकुल फिरूं रैन दिन,
बिरह कलेजो खाय ॥ १ ॥
दिवस न भूख नींद नहिं रैना,
मुखसूं कथत न आवै बैना।

कहा कहूं कछु कहत न आवै,
मिल कर तपत बुझाय ॥ २ ॥
क्यूं तरसावो अन्तरजामी,
आय मिलो किरपा कर स्वामी।
मीरा दासी जनम जनमकी,
पड़ी तुम्हारे पाय ॥ ३ ॥

(१४३)

मारवाड़ी गत

सूरत दीनानाथसे लगी,
तूं तो समझ सुहागण सुरता नार ॥
लगनी लहँगो पहर सुहागण,
बीती जाय बहार।
धन जोबन है पावणा री,
मिलै न दूजी बार ॥ १ ॥
रामनामको चुड़लो पहिरो,
प्रेमको सुरमो सार।

नकवेसर हरि नामकी री,
उतर चलोंनी परले पार ॥ २ ॥

ऐसे वरको क्या वरूं,
जो जन्मे और मर जाय ।

वर वरिये एक सांवरो री,
(मेरो) चुड़लो अमर होय जाय ॥ ३ ॥

मैं जान्यो हरि मैं ठग्यो री,
हरि ठग ले गयो मोय ।

लख चौरासी मोरचा री,
छिनमें गेरयाछै बिगोय ॥ ४ ॥

सुरत चली जहाँ मैं चली री,
कृष्ण-नाम झनकार ।

अविनाशीकी पोलपर जी,
मीरां करै छै पुकार ॥ ५ ॥

(१४४)

हे री मैं तो प्रेम दिवानी
'मेरो' दरद न जाने कोय ॥ टेक ॥
सूली ऊपर सेज हमारी,
सोणो किस बिध होय ॥
गगन-मँडलपर सेज पियाकी,
किस बिध मिलणो होय ॥ १ ॥
घायलकी गति घायल जानै,
जो कोई घायल होय।
जौहरीकी गति जौहरि जाने,
दूजा न जाने कोय ॥ २ ॥
दरदकी मारी बन बन डोलूं,
वैद मिल्यो नहिं कोय।
मीराकी प्रभु पीर मिटै जद,
वैद सांवलियो होय ॥ ३ ॥

(१४५)

राग आसावरी

बसो मेरे नैननमें नंदलाल॥

मोहिनी मूरति साँवरि सूरति,

नैना बने विशाल।

अधर-सुधा रस मुरली राजत,

उर बैजन्ती-माल॥१॥

क्षुद्र घण्टिका कटि-तट शोभित,

नूपुर शब्द रसाल।

मीरा प्रभु सन्तन सुखदाई,

भक्त-बछल गोपाल॥२॥

(१४६)

मेरो मन रामहि राम रटै रे॥ टेक॥

राम नाम जप लीजे प्राणी,

कोटिक पाप कटै रे।

जनम जनमके खत जु पुराने,
नामहि लेत फटै रे ॥ १ ॥
कनक-कटोरे अमृत भरियो,
पीवत कौन नटे रे।
मीरा कह प्रभु हरि अविनाशी,
तन मन ताहि पटे रे ॥ २ ॥

(१४७)

राग बागेश्री

भज ले रे मन गोपाल गुना।
अधम तरे अधिकार भजनसूं
जोइ आये हरि सरना ॥
अविश्वास तो साखि बताऊँ,
अजामील गणिका सदना ॥१॥
जो कृपाल तन मन धन दीन्हों,
नैन नासिका मुख रसना।

जाको रचत मास दस लागे,
ताहि न सुमिरो एक छिना ॥२॥
वालापन सब खेल गंवायो,
तरुन भयो जब रूप घना।
वृद्ध भयो जब आलस उपज्यो,
माया मोह भयो मगना ॥३॥
गज अरु गीधहु तरे भजनसूं,
कोउ तर्‌यो नहिं भजन विना।
धनाभगत पीपामुनि सिवरी,
मीराकी हूं करो गणना ॥४॥

(१४८)

मन रे परसि हरिके चरण।
सुभग शीतल कमल कोमल,
त्रिविध ज्वाला हरण ॥

जिन चरण प्रह्लाद परसे,
इन्द्र पदवी-धरण ॥१॥

जिन चरण ध्रुव अटल कीन्हें,
राखि अपनी शरण।

जिन चरण ब्रह्माण्ड भेट्यो,
नख सिखा सिरी धरण ॥२॥

जिन चरण प्रभु परसि लीनो,
तरी गोतम-घरण।

जिन चरण कालीनाग नाथ्यो,
गोप-लीला-करण ॥३॥

जिन चरण गोवर्द्धन धार्यो,
गर्व मघवा हरण।

दासि मीरा लाल गिरधर,
अगम तारण तरण ॥४॥

(१४६)

राग आसावरी

भज मन चरनकमल अबिनासी ॥
जेताई दीसे धरनि गगन बिच,
तेताई सब उठि जासी ।
कहा भयो तीरथ व्रत कीन्हे,
कहा लिये करवत कासी ॥१॥
इस देहीका गर्व न करना,
माटीमें मिल जासी ।
यो संसार चहरकी बाजी,
सांझ पड्याँ उठ जासी ॥२॥
कहा भयो है भगवा पहर्यां,
घर तज भये सन्यासी ।
जोगी होय जुगति नहिं जानी,
उलट जनम फिर आसी ॥३॥

अरज करूं अबला कर जोरे,

श्याम तुम्हारी दासी।

मीराके प्रभु गिरिधर नागर,

काटो जमकी फाँसी ॥४॥

(१५०)

राम राम रस पीजै,

मनुआं राम राम रस पीजै।

तज कुसंग सतसंग बैठ नित,

हरि चरचा सुन लीजै ॥१॥

काम क्रोध मद लोभ मोहकूं,

बहा चित्तसे दीजै।

मीराके प्रभु गिरधर नागर,

ताहिके रंगमें भीजै ॥२॥

(१५१)

सुण लीजो विनती मोरी,

मैं शरण गही प्रभु तोरी ॥१॥

तुम (तो) पतित अनेक उधारे,
भवसागरसे तारे ॥ २ ॥
मैं सबका तो नाम न जानूं,
कोइ कोई नाम उचारे ॥ ३ ॥
अंबरीष सुदामा नामा,
तुम पहुंचाये निज धामा ॥ ४ ॥
ध्रुव जो पाँच वर्षके बालक,
तुम दरश दिये घनश्यामा ॥ ५ ॥
धना भक्तका खेत जमाया,
कबिराका बैल चराया ॥ ६ ॥
शबरीका जूठा फल खाया,
तुम काज किये मन भाया ॥ ७ ॥
सदना औ सेना नाई,
को तुम कीन्हा अपनाई ॥ ८ ॥
करमाकी खिचड़ी खाई,
तुम गणिका पार लगाई ॥ ६ ॥

मीरा प्रभु तुमरे रंग राती,

या जानत सब दुनियाई ॥१०॥

(१५२)

हरि तुम हरो जनकी भीर।

द्रोपदीकी लाज राखी,

तुम बढ़ायो चीर।

भक्त कारन रूप नरहरि,

धरयो आप शरीर ॥१॥

हरिनकश्यप मारि लीन्हो,

कियो बाहर नीर।

दासि मीरा लाल गिरधर,

दुख जहां तहं पीर ॥२॥

(१५३)

अब मैं शरण तिहारी जी,

मोहिं राखो कृपानिधान ॥टेक॥

अजामील अपराधी तारे,

तारे नीच सदान।

जल डूबत गजराज उबारे,
गणिका चढ़ी बिमान ॥१॥
और अधम तारे बहुतेरे,
भाखत सन्त सुजान।
कुब्जा नीच भीलनी तारी,
जानै सकल जहान ॥२॥
कहं लग कहूं गिनत नहिं आवै,
थकि रहे वेद पुरान।
मीरा कहै मैं शरण थांरी,
सुनिये दोनों कान ॥३॥

(१५४)

तुम सुनो दयाल म्हांरी अरजी ॥ टेक ॥
भौसागरमें बही जात हूं,
काढ़ो तो थांरी मरजी ॥

जो संसार सगो नहिं कोई,
सांचा सगा रघुवरजी ॥ १ ॥
मात पिता और कुटुंब कबीलो,
सब मतलबके गरजी ॥
मीराकी प्रभु अरजी सुनलो,
चरण लगावो थांरी मरजी ॥ २ ॥

(१५५)

राग भैरवी

मीराको प्रभु साची दासी बनाओ।
झूठे धन्धोंसे मेरा फन्दा छुड़ाओ ॥ १ ॥
लूटे ही लेत विवेकका डेरा।
बुधि बल यदपि करूं बहुतेरा ॥ २ ॥
हाय! हाय! नहिं कछु वश मेरा।
मरत हूं विवश प्रभु धाओ सवेरा ॥ ३ ॥
धर्म-उपदेश नितप्रति सुनती हूं।
मन कुचालसे भी डरती हूं ॥ ४ ॥

सदा साधु सेवा करती हूं।

सुमिरण ध्यानमें चित्त धरती हूं ॥५॥

भक्ति मारग दासीको दिखलाओ।

मीराको प्रभु साची दासी बनाओ ॥६॥

(१५६)

राग सारंग

म्हांरी सुध ज्यूं जानो ज्यूं लीजो जी।

पल पल भीतर पन्थ निहारूं,

दर्शन म्हांने दीजो जी ॥१॥

मैं तो हूं बहु औगणहारी,

औगण चित मत दीजो जी ॥२॥

मैं तो दासी थांरे चरण कमलकी,

मिल बिछुरन मत कीजो जी ॥३॥

मीरां तो सतगुरुजी शरणे,

हरि चरणां चित दीजो जी ॥४॥

(१५७)

मारवाड़ी गत

थे तो पलक उघाड़ो दीनानाथ,

मैं हाजिर नाजिर कदकी खड़ी ॥ टेक ॥

साजनियां दुशमन होय बैठ्या,

सबने लगूं कड़ी।

तुम बिन साजन कोई नहिं है,

डिगी नाव मेरी समँद अड़ी ॥ १ ॥

दिन नहिं चैन रैन नहिं निदरा,

सूखूं खड़ी खड़ी।

बान विरहका लग्या हियेमें,

भूलूं न एक घड़ी ॥ २ ॥

पत्थरकी तो अहिल्या तारी,

बनके बीच पड़ी।

कहा बोझ मीरामें कहिये,

सौपर एक धड़ी ॥ ३ ॥

गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे,
धुरसे कलम भिड़ी।
सतगुरु सैन दई जब आके,
जोतमें जोत रली ॥ ४ ॥

(१५८)

राग बागेश्री

घड़ी एक नहिं आवड़ै, तुम दरशण बिन मोय।
तुम हो मेरे प्राणजी, कसूं जीवण होय ॥ टेक ॥
धान न भावे नींद न आवे, बिरह सतावे मोय।
घायलसी घूमत फिरूं रे, मेरा दरद न जाने कोय १
दिवस तो खाय गमाइया रे, रैण गमाई सोय।
प्राण गमाया झूरतां रे, नैण गमाया रोय ॥२॥
जो मैं ऐसा जाणतो रे, प्रीत किये दुख होय।
नगर ढिंढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोय॥३॥
पंथ निहारूं डगर बुहारूं, ऊभी मारग जोय।
मीराके प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिलियां सुख होय

(१५६)

राग काफी

इक अरज सुनो पिया मोरी,
मैं किण संग खेलूं होरी ॥ टेक॥
तुम तो जाय विदेशां छाये,
हमसे रहे चित चोरी।
तन आभूषण छोड़े सब ही,
तज दिये पाट पटोरी ॥
मिलनकी लग रही डोरी ॥ १ ॥
आप मिल्यो विन कलन पड़त है,
त्यागे तिलक तमोली।
मीराने प्रभु मिलज्यो माधो,
सुणज्यो अरजी. मोरी ॥
रस बिना बिरहण दोरी ॥ २ ॥

(१६०)

राग भैरवी

छोड़ मत जाज्यो जी महाराज ॥ टेक ॥
मैं अबला बल नांय गुसाईं,
तुमही मेरे सिरताज।
मैं गुणहीन गुण नांय गुसाईं,
तुम समरथ महाराज ॥ १ ॥
थाँरी होयके किणरे जाऊं,
तुम ही हिवड़ारो साज।
मीराके प्रभु और न कोई,
राखो अबके लाज ॥ २ ॥

(१६१)

राग भैरवी

श्याम म्हांने चाकर राखोजी,
गिरधारीलाल चाकर राखोजी ॥ टेक ॥

चाकर रहसूं बाग लगासूं,
नित उठ दरसन पासूं।
वृन्दावनकी कुंज गलिनमें,
गोविन्दका गुण गासूं ॥ १ ॥
चाकरीमें दरशन पाऊं,
सुमिरन पाऊं खरची।
भाव भगति जागिरी पाऊं,
तीनों बातां सरसी ॥ २ ॥
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे,
गल बैजन्ती माला।
वृन्दावनमें धेनु चरावे,
मोहन मुरलीवाला ॥ ३ ॥
ऊंचे ऊंचे महल बनाऊं,
बिच बिच राखूं बारी।
सांवरियांके दरशन पाऊं,
पहिर कुसूँमल सारी ॥ ४ ॥

जोगी आया जोग करनकूं,
तप करने सन्यासी।
हरी भजनको साधू आये,
वृन्दावनके वासी ॥ ५ ॥
मीराके प्रभु गहिर गंभीरा,
हृदै रहो जी धीरा।
आधी रात प्रभु दर्शन दीन्हो,
प्रेम नदीके तीरा ॥ ६ ।

(१६२)

राग काफी

अब तो निभायाँ सरेगी,
बाँह गहेकी लाज ॥ टेक ॥
समरथ सरन तुम्हारी सइयाँ,
सरब सुधारण काज।
भवसागर संसार अपरबल,
जामें तुम हो जहाज ॥ १ ॥

निरधाराँ आधार जगत गुरु,
तुम बिन होय अकाजं ॥ १ ॥
जुग जुग भीर हरी भक्तनकी,
दीनी मोक्ष समाज ॥ २ ॥
मीरा सरण गही चरणनकी,
लाज रखो महाराज ॥ ३ ॥

(१६३)

राग आसावरी

रमैया मैं तो थारे रंग राती।
औरोंके पिया परदेस बसंत है,
लिख लिख भेजें पाती ॥
मेरा पिया मेरे हृदय बसत है,
रोल करूं दिन राती ॥ १ ॥
चूवा चोला पहिर सखी री,
मैं झुरमट रमवा जाती ।

झुरमटमें मोहिं मोहन मिलिया,

घाल मिली गलबाँथी ॥२॥

और सखी मद पी पी माती,

मैं बिन पीयां ही माती ।

प्रेम-भठीको मैं मद पीयो,

छकी फिरूं दिन राती ॥३॥

सुरत निरतको दिवलो जोयो,

मनसा पूरन बाती ।

अगम घाणिको तेल सिंचायो,

बाल रही दिन राती ॥४॥

जाऊँनी पीहरिये जाऊँनी सासरिये,

हरिसूं सैन लगाती ।

मीराके प्रभु गिरधर नागर,

हरि-चरना चित लाती ॥५॥

(१६४)

जोगी मतजा मतजा मतजा

पांव परूँ मैं तेरी ॥टेक॥

प्रेम-भक्तिको पैडों हि न्यारो,

हमकूं गैल बताजा ॥१॥

अगर चन्दनकी चिता रचाऊं

अपने हाथ जलाजा ॥२॥

जल बल भई भसकी ढेरी,

अपने अंग लगाजा ॥३॥

मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर,

जोतमें जोत मिलाजा॥४॥

(१६५)

मोरे लागी लटक हरि चरननकी।

चरन बिना मोहे कछु नहिं भावे।

झूठी माया सब सपननकी ॥१॥

भवसागर सब सूख गयो है।
फिकर नहीं मोहे तरननकी ॥ २ ॥
मीरांके प्रभु गिरधर नागर।
उलट भई मोरे नयननकी ॥ ३ ॥

(१६६)

सीसोद्यो रूठ्यो तो म्हारो काँइ करलेसी।
म्हेतो गुण गोविंदका गास्यां हो माई ॥ १ ॥
राणाजी रूठ्यो तो वांरो देस रखासी।
हरिजी रूठ्यां किठे जास्यां हो माई ॥ २ ॥
लोक लाजकी तो काण न मानाँ।
निरभे निसाण घुरास्यां हो माई ॥ ३ ॥
राम-नामकी भयाभ चल्यास्यां।
भवसागर तिरजास्यां हो माई ॥ ४ ॥
मीरा शरण सांवले गिरधरकी।
चरण कमल लपटास्यां हो माई ॥ ५ ॥

(१६७)

राग विलावल

हरि विनु क्यों जिऊं री माय।

हरि कारन वौरी भई,

जस काठहि घुन खाय ॥ १ ॥

औषध्र मूल न संचरै,

मोहिं लागो वौराय।

कमठ दादुर वसत जलमहं,

जलहिंते उपजाय ॥ २ ॥

हरी ढंढ़न गई वन वन,

कहुं मुरली धुन पाय।

मीराके प्रभु लाल गिरधर,

मिलि गये, सुखदाय ॥ ३ ॥

(१६८)

सखी मेरी नींद नसानी हो ॥टेक॥

पियाको पन्थ निहारते

सब रैन बिहानी हो ॥१॥

सखियन मिलकर सीख दई,
मन एक न मानी हो।
बिन देखे कल ना परे,
जिय ऐसी ठानी हो ॥२॥
अंग छीन व्याकुल भई
मुख पिय पिय बानी हो।
अन्तर वेदन विरहकी कोइ,
पीर न जानी हो ॥३॥
ज्यों चातक घनको रटे,
मछली जिमि पानी हो।
मीरा व्याकुल विरहिणी,
सुध बुध विसरानी हो ॥४॥

(१६६)

राग भैरवी

आली री मेरे नैनन बान पड़ी ॥ टेक ॥
चित्त चढ़ी मेरे माधुरि मूरत,
उर बिच आन अड़ी ॥ १ ॥

कबकी ठाढ़ी पंथ निहारूं,
अपने भवन खड़ी ॥ २ ॥
कैसे प्रान पिया बिन राखूं,
जीवन मूल जड़ी ॥ ३ ॥
मीरा गिरधर हाथ बिकानी,
लोक कहै बिगड़ी ॥ ४ ॥

(१७०)

मारवाड़ी गत

राम नाम मेरे मन बसियो,
रसियो राम रिझाऊं ए माय ।
मैं मँद-भागण करम अभागण,
कीरत कैसे गाऊं ए माय ॥ १ ॥
बिरह पिंजरकी बाड़ सखीरी,
उठकर जी हुलसाऊं ए माय ।
मनकूं मार सजूं सतगुरुसूं,
दुरमत दूर गमाऊं ए माय ॥ २ ॥

डंको नाम सुरतकी डोरी,

कड़ियां प्रेम चढ़ाऊं ए माय।

प्रेमको ढोल बण्यो अति भारी,

मगन होय गुण गाऊं ए माय ॥ ३ ॥

तन करूं ताल मन करूं ढफली,

सोती सुरति जगाऊं ए माय।

निरत करूं मैं प्रीतम आगे,

तो प्रीतम-पद पाऊं ए माय ॥ ४ ॥

मो अबलापर किरपा कीज्यो,

गुण गोबिन्दका गाऊं ए माय।

मीराके प्रभु गिरधर नागर,

रज चरणांकी पाऊं ए माय ॥ ५ ॥

(१७१)

नातो नामको जी म्हांस्यूं

तनक न तोड्यो जाय ॥ टेक ॥

पाना ज्यूं पीली पड़ी रे,
लोग कहे पिंड रोग।
छाने लांघण मैं किया रे,
राम मिलणके जोग ॥ १ ॥
बावल वैद बुलाइया रे,
पकड़ दिखाई म्हारी बांह।
मूरख वैद्य मरम नहीं जाणे,
कसक कलेजे मांह ॥ २ ॥
जाओ वैद घर आपणे रे,
म्हारो नाम न लेय।
मैं तो दाझी बिरहकी रे,
काहे कूं औषध देय ॥ ३ ॥
मांस गल गल छीजियो रे,
करक रह्या गल आय।
आंगलियांकी मूंदड़ी म्हारे,
आवण लागी बांह ॥ ४ ॥

रह रह पापी पपीहरा रे,
पिवको नाम न लेय।
जे कोइ विरहण साम्हले तो,
पिव कारण जिव देय ॥ ५॥
छिन मन्दिर छिन आंगणे रे,
छिन छिन ठाढ़ी होय।
घायलसी भूंमूं खड़ी म्हारी,
व्यथा न बूझे कोय ॥ ६ ॥
काढ़ कलेजो मैं धरूं रे,
कौवा तूं ले जाय।
ज्यां देशां म्हारो हरि बसै रे,
वाँ देखत तू खाय ॥ ७ ॥
म्हारे नातो रामको रे,
और न नातो कोय।
मीरा व्याकुल विरहणी रे,
(हरि) दर्शन दीज्यो मोय ॥ ८ ॥

(१७२)

राग आसावरी

दरस बिन दूखन लागे नैन ॥
जबसे तुम बिछुरे मेरे प्रभुजी,
कबहुं न पायो चैन ॥ १ ॥
शब्द सुनत मेरी छतियां कम्पै,
मीठे लागे बैन ।
एक-टकटकी पंथ निहारूं,
भई छमासी रैन ॥ २ ॥
बिरह बिथा कासूं कहुं सजनी,
बह गई करवत नैन ।
मीराके प्रभु कब रे मिलोगे,
दुख मेटन सुख दैन ॥ ३ ॥

(१७३)

राग भैरवी

मैं तो अपने सैयाँ संग राची ।
अब काहेकी लाज सजनी,
परगट ह्वै नाची ॥ १ ॥

दिवस भूख न चैन कबहूं,
नींद निशि नासी।
बेध वारको पार होइगो,
प्रेम गृह-गांसी ॥ २ ॥
कुल कुटुँब सब आनि त्यागे,
जैसे मधु मासी।
दास मीरा लाल गिरधर,
मिटी जग हांसी ॥ ३ ॥

(१७४)

राग भैरवी

आली ! सांवरेकी दृष्टि मानो,
प्रेमकी कटारी है ॥ टेक ॥
लागत बेहाल भई,
तनकी सुधि बुद्धि गई।
तन मन सब व्यापो प्रेम,
मानो मतवारी है ॥ १ ॥

सखियां मिलि दोइ चारी,
बावरीसी भई न्यारी।
हौं तो वाको नीके जानौं,
कुञ्जको बिहारी है॥ २॥
चन्द्को चकोर चाहै,
दीपक पतंग दाहै।
जल बिना मीन जैसे,
तैसे प्रीत प्यारी है॥ ३॥
विनती करों हे श्याम,
लागूं मैं तुम्हारे पांव।
मीरा प्रभु ऐसी जानो,
दासी तुम्हारी है॥ ४॥

(१७५)

मारवाड़ी गत

गली तो चारो बन्द हुई,
मैं कैसे मिलूँ हरिसे जाय।

ऊंची नीची राह रपटीली,
पाँव नहीं ठहराय ।
सोच सोच पग धरूं जतनसे,
बार बार डिग जाय ॥ १ ॥
ऊंचा नीचा महल पियाका,
हमसे चढ्या न जाय ।
पिया दूर पंथ म्हाँरो झीणो,
सुरत झुकोला खाय ॥ २ ॥
कोस कोस पर पहरा बैठ्या,
पैंड पैंड बटमार ।
हे बिधना कैसी रच दीन्ही,
दूर बसायो म्हारो गाम ॥ ३ ॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर,
सतगुरु दई बताय ।
जुगन जुगनसे बिछड़ी मीरा,
घरमें लीन्ही आय ॥ ४ ॥

(१७६)

राग आसावरी

बाला मैं बैरागण हूंगी ।
जिन भेषाँ म्हारो साहिब रीझे,
सोही भेष धरूंगी ॥ १ ॥
शील संतोष धरूं घट भीतर,
समता पकड़ रहूंगी ।
जाको नाम निरंजन कहिये,
ताको ध्यान धरूँगी ॥ २ ॥
गुरूके ज्ञान रँगूं तन कपड़ा,
मन मुद्रा पैरूँगी ।
प्रेम-प्रीतसू हरि गुण गाऊं,
चरणन लिपट रहूंगी ॥ ३ ॥
या तनकी मैं करूँ कीगंरी,
रसना नाम कहूंगी ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर,
साधां संग रहूंगी ॥ ४ ॥

(१७७)

राग बिलावल

माई म्हांरी हरि न बूझी बात ।
पिंडमेंसे प्राण पापी,
निकस क्यूं नहिं जात ॥ १ ॥
रैन अन्धेरी विरह घेरी,
तारा गिणत निसि जात ।
ले कटारी कण्ठ चीरूँ,
करूँगी अपघात ॥ २ ॥
पट न खोल्या मुखाँ न बोल्या,
साँझ लग परभात ।
अबोलनामें अवधि बीती,
काहेकी कुसलात ॥ ३ ॥
सुपनमें हरि दरस दीन्हों,
मैं न जाण्यो हरि जात ।
नैन म्हांरा उघड़ आया,
रही मन पछतात ॥ ४ ॥

आवन आवन होय रह्यो रे,
नहिं आवनकी बात।
मीरा व्याकुल विरहनी रे,
बाल ज्यूं विललात ॥५॥

(१७८)

राग माड

माई म्हें गोविन्दो लीनो मोल ॥ टेक ॥
कोई कहै सस्तो कोई कहै महंगो,
लीनो तराजू तोल ॥१॥
कोई कहै घरमें, कोई कहै बनमें,
राधाके संग किलोल ॥२॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर,
आवत प्रेमके मोल ॥३॥

(१७९)

राग सारंग

पायो जी म्हेतो राम रतन धन पायो।
वस्तु अमोलक दी म्हारे सतगुरु,
किरपा कर अपनायो ॥१॥

जनम जनमकी पूँजी पाई,
जगमें सभी खोवायो ॥
खरचै नहिं कोइ चोर न लेवै,
दिन दिन बढ़त सवायो ॥ २ ॥
सतकी नाव खेवटिया सतगुरु,
भवसागर तर आयो ॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर,
हरख हरख जश गायो ॥ ३ ॥

(१८०)

मारवाड़ी गत

इण सरवरियां री पाल,
मीरां बाइ सांपड़े ।
सांपड़ किया असनान,
सूरज सामी जप करे ।
(प्रश्न) होय विरंगी नार,
डगरां विच क्यूं खड़ी ॥ १ ॥

काँई थारो पीहर दूर,
घरां सासू लड़ी ।
(उत्तर) चल्यो जारे असल गुंवार,
तनै मेरी के पड़ी ॥ २ ॥
गुरू म्हारा दीनदयाल,
हीरां रा पारखी ।
दियो म्हाने ज्ञान बताय,
संगत कर साधरी ॥ ३ ॥
खोई कुलकी लाज
मुकन्द थांरे कारणे ।
वेगही लीज्यो सम्हाल,
मीरा पड़ी बारणे ॥ ४ ॥

(१८१)

राणाजी म्हाँरी प्रीति पुरबली मैं कांई करूं ।
राम नाम बिन नहीं आवड़े,
हिवड़ो झोला खाय ।

भोजनिया नहिं भावै म्हाँने,
नींदड़ली नहिं आय ॥१॥
बिषको प्यालो भेजियोजी,
जाओ मीरा पास।
कर चरणामृत पी गई,
म्हाँरे गोविन्द रे विश्वास ॥२॥
बिषको प्यालो पी गई जी,
भजन करे राठौर।
थारी मारी ना मरूं,
म्हांरो राखणवालो और ॥३॥
छापा तिलक लगाइया जी,
मनमें निश्चै धार।
रामजी काज साँवरिया जी,
म्हाँने भावैं गरदन मार ॥४॥
पेट्यां वासक भेजियो जी,
यो छै मोतीड़ाँरो हार।

नाग गलेमें पहिरियो,
म्हांरे महलाँ भयो उजियार ॥५॥
राठौड़ाँकी धीयड़ी जी,
सीसोद्याँके साथ ।
ले जाती बैकुण्ठको,
म्हांरी नेक न मानी बात ॥६॥
मीरा दासी श्यामकी जी,
श्याम गरीब निवाज ।
जन मीराको राखज्यो कोइ,
बांह गहेकी लाज ॥७॥

(१८२)

राग आसावरी

मीरा मगन भई हरिके गुन गाय ।
सांप पिटारा राणा भेज्या,
मीरा हाथ दिया जाय ।
न्हाय धोय जब देखन लागी,
सालिगराम गयी पाय ॥१॥

जहरका प्याला राणा भेज्या,
अमृत दीन्ह बनाय।
न्हाय धोय जब पीवन लागी,
हो गइ अमर अंचाय ॥२॥
सूली सेज राणाने भेजी,
दीज्यो मीरा सुलाय।
सांझ भई मीरा सोवन लागी,
मानों फूल बिछाय ॥३॥
मीराके प्रभु सदा सहाई,
राखे बिघ्न हटाय।
भजन भावमें मस्त डोलती,
गिरिधर पै बलिजाय ॥४॥

(१८३)

राग बागेश्री

साजन घर आवो मीठा बोलां ॥ टेक ॥
कबकी खड़ी मैं पन्थ निहारूं,
थाँरी, आयाँ होसी भला ॥ १ ॥

आओ निशङ्क शङ्क मत मानो,
आया ही सुक्ख रहेला ॥ २ ॥
तन मन वार करूं न्योछावर,
दीज्यो श्याम मो हेला ॥ ३ ॥
आतुर बहुत विलंब मत कीज्यो,
आयाँ ही रंग रहेला ॥ ४ ॥
तेरे कारन सब रंग त्यागा,
काजल तिलक तमाला ॥ ५ ॥
तुम देख्यां बिन कल न पड़त है,
कर धर रही कपोला ॥ ६ ॥
मीरा दासी जनम जनमकी,
दिलकी घूंडी खोला ॥ ७ ॥

(१८४)

राग भैरवी –

मैं तो मेरे सांवरियेने देखवो करूंरी ॥ टेक ॥
तेरो उमरण तेरो ही सुमरण,
तेरो ही ध्यान धरूं ॥ १ ॥

जहाँ जहाँ पाँव धरूँ धरणीपर,
तहाँ तहाँ निरत करूं ॥ २ ॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर,
चरणन लिपट परूं ॥ ३ ॥

(१८५)

राग काफी

नँदनन्दन बिलमाई,
बदराने घेरी माई ॥ टेक
इत घन गरजे, उत घन गरजे,
चमकत बिज्जु सवाई ।
उमड़ घुमड़ चहुँ दिशिसे आया,
पवन चले पुरवाई ॥ १ ॥
दादुर मोर पपीहा बोले,
कोयल शब्द सुनाई ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर,
चरण-कमल चित लाई ॥ २ ॥

(१८६)

राग काफी

फागुनके दिन चार

होली खेल मना रे ॥ टेक

बिन करताल पखावज बाजै,

अनहदकी झनकार।

बिन सुर राग छतीसों गावे,

रोम रोम रणकार ॥१॥

शील सन्तोषकी केशर घोली,

प्रेम-प्रीति पिचकार।

उड़त गुलाल लाल भये बादल,

बरसत रंग अपार ॥२॥

घटके सब पट खोल दिये हैं,

लोक लाज सब डार।

मीराके प्रभु गिरधर नागर,

चरण कमल बलिहार ॥३॥

(१८७)

राग काफी

घर आँगन न सुहावे,
पिया बिन मोहि न भावे ॥ टेक ॥
दीपक जोय कहा करूं सजनी!
हरि परदेश रहावे।
सूनी सेज जहर ज्यूं लागे,
सिसक सिसक जिय जावे।
नयन निद्रा नहीं आवे ॥ १ ॥
कबकी ठाढ़ी मैं मग जोऊं,
निस दिन बिरह सतावे।
कहा कहूं कछु कहत न आवे,
हिवड़ो अति अकुलावे,
हरी कब दरस दिखावे ॥ २ ॥
ऐसो है कोइ परम सनेही,
तुरत संदेशो लावे।

वा बिरियां कब होसी मुझको,
हरि हँस कण्ठ लगावे,
मीरा मिल होरी गावे ॥ ३ ॥

(१८८)

राग सारंग

चलो अगमके देश
काल देखत डरे।
वहां मेरा प्रेमका हौज
हंस केली करे ॥ १ ॥
ओढ़न लज्जा चीर
धीरजको घांघरो।
छिमता कांकण हाथ
सुमतको मूंदरो ॥ २ ॥
पूंची है विश्वास
चूड़ो चित ऊजलो।
दिल दुलड़ी दरियाव
सांचको दोवड़ो ॥ ३ ॥

दाँताँ अमृत मेख
दयाको बोलणो।
उबटन गुरुको ज्ञान
ध्यानको धोवणो॥ ४॥
कान अखोटा ज्ञान
जुगतको झंठणो।
बेसर हरिको नाम
काजल है धरमको॥ ५॥
जौहर शील संतोष
निरतको घूँघरो।
बिंदली गज मणि-हार
तिलक हरि प्रेमको॥ ६॥
सज सोला सिणगार
पहिर लीनी राखड़ी।

सांँवरिये सूँ प्रीति,
औरांँसे आखड़ी ॥ ७ ॥
पतिवरताकी सेज
प्रभूजी पधारिया ।
गावे मीरा बाई
दासी कर राखिया ॥ ८ ॥

गीताप्रेसमें मिलनेवाली पुस्तकें

श्रीमद्भगवद्गीता

मूल, पदच्छेद, अन्वय, साधारणभाषाटीका और टिप्पणियोंसहित

१-इसकी टीका ऐसी सरल है कि साधारण मनुष्य भी थोड़ी मेहनतमें समझ सकते हैं।

२-श्लोकोंका ठीक अनुवाद रखा गया है।

३-हर संस्कृत शब्दके सामने उसका अर्थ दिया गया है जिसमें थोड़े दिनतक इस पुस्तकको पढ़नेपर सिर्फ श्लोकमात्र पढ़नेसे ही अर्थ ध्यानमें रह सकता है। हाथ कर्घेके बुने पूरे कपड़ेकी अच्छी मजबूत जिल्द लगायी गयी है। ५७० पृष्ठ है। किताबका आकार डिमाई ८ पेजी है। चार तिरंगे चित्र हैं। मूल्य सिर्फ १।); बहुत बढ़िया कागज और मजबूत जिल्द मूल्य २)

इसी प्रकारकी गीता साइज और कुछ

टाइप छोटाकरके सोलह पेजीमें छापी गयी है। इसमें गीताके सूक्ष्म विषय हर श्लोकके साथ किनारेपर रखे गये हैं। वह एक प्रकारसे हर श्लोकका सारांश है। प्रधान विषय हर अध्यायके आरम्भमें रखे गये हैं। पृष्ठ ४६८, इस विशेषताके सिवा शेष बातें १) वाली गीताके अनुसार ही है। इसका मूल्य विना जिल्दका ॥≡) सजिल्द ॥।=)

गीता-साधारण भाषाटीकासहित सचित्र
३५२ पृष्ठ ≠)॥ सजिल्द ≡)॥

गीता-केवल भाषा, मोटा टाइप, सचित्र
मूल्य ।) सजिल्द ... ।=)

गीता-मूल मोटे अक्षरवाली, सचित्र
मूल्य ।-) सजिल्द ... ।≡)

गीता-मूल, ताबीजी साइज सजिल्द ≠)

गीता-मूल, विष्णुसहस्रनाम सहित सचित्र =)

गीता-केवल दूसरा अध्याय)।

गीता-का सूक्ष्म विषय पाकेट साइज -)।

डिमाई आठपेजी साइज -)॥

तत्त्व-चिन्तामणि

कर्म, ज्ञान भक्ति और सदाचार-सम्बन्धी आध्यात्मिक विषयोंका बड़ा सुन्दर निरूपण किया गया है, इस ग्रन्थके पढ़ने, मनन करने और इसमें बतलाये हुए साधनोंका अवलम्बन करने-से मनुष्य इहलोक और परलोकमें सुखी होनेके साथ ही साथ दुर्लभ परमपदका भी अधिकारी हो सकता है। छपाई सफाई बहुत ही सुन्दर मोटे ऐन्टिक् कागज, सचित्र और सजिल्द ४०४ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य केवल१) बिना जिल्द॥।-)

भगवन्नामाङ्क

पृष्ठ संख्या ११०, चित्र ४१, सन्त महात्माओंके उपदेश। कीमत डाक महसूल सहित (कमीशन २५ सैकड़ा) १।)

गीताङ्क

हालहीका प्रकाशित 'गीतांक' पृष्ठ ५१० तिरंगे एकरंगे चित्र १७०, मूल्य २॥≈) सजिल्द ३≈)

अन्यान्य पुस्तकें

हरेराम चौदहमाला सजिल्द ...	।-)
पत्र-पुष्प सुन्दर भावमय भजनोंकी पुस्तक, दो रंगीन चित्र ...	≤)॥
मानव-धर्म (मनुष्यके दश धर्म)	≡)
गीतोक्त सांख्ययोग और निष्कामकर्मयोग	-)॥
सच्चा सुख और उसकी प्राप्तिके उपाय	-)॥
मनुस्मृतिका दूसरा अध्याय (भापाटीका)	-)॥
स्त्रीधर्मप्रश्नोत्तरी	≤)
मनको वशमें करनेका उपाय सचित्र	-)।
श्रीप्रेमभक्तिप्रकाश दो रंगीन चित्र	-)
त्यागसे भगवत्प्राप्ति सचित्र ...	-)
भगवान् क्या है?	-)
ब्रह्मचर्य	-)
समाजसुधार	-)
श्रीहरेरामभजन पुस्तक ...	)॥।
विष्णुसहस्रनाम मोटा टाइप ...	)॥।
श्रीसीतारामभजन पुस्तक ...	)॥

१-कमीशनदर इस प्रकार है। ५) से १०) तक १२॥) सैकड़ा, फिर २५) तक १८॥) इससे ऊपर २५) सैकडा। कोई सज्जन इससे ज्यादा कमीशनके लिये लिखापढ़ी न करें।

२-एक रुपयेसे कमीकी वी० पी० प्रायः नहीं भेजी जाती, इससे कमकी किताबोंके लिये डाक-महसूलसहित टिकट भेजें।

३-मालका महसूल और पेकिंग इत्यादि खर्च ग्राहकके जिम्मे है।

४-विशेप जानकारीके लिये सूचीपत्र मंगाइये।

कल्याण

(भक्ति ज्ञान वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिकपत्र)

वार्षिक मूल्य ४=)

कल्याणके लिए कौन क्या कहते हैं:—

"हिन्दीके अध्यात्म, ज्ञान और भक्ति क्षेत्रमें कल्याण जो का ' कर रहा है वह अनुपमेय है। अपने विषयका यह बिल्कुल अनोखा पत्र है। सुन्दर लेख-चयन और अच्छी छपाई-सफाईके साथ साथ विज्ञापन न छापनेके आदर्शका पालन करते तथा प्रति वर्ष एक इतना सुन्दर विशेषांक निकालते हुए भी वह सिर्फ कुल ४=) वार्षिकमें अपने पाठकोंके हृदयमें भक्ति, ज्ञान और वैराग्यकी जो सुरसरि बहाता है वह सर्वथा प्रशंसनीय है × × × × आशा है कि हिन्दी पाठक ऐसे अच्छे पत्रको खूब अपनायेंगे। (प्रताप, कानपुर)

"...मैं इसके भक्ति-विषयक लेखोंको पढ़कर जिस आनन्दकी प्राप्ति करता हूं, उसका अनुभव मेरा हृदय ही कर सकता है। ...ईश्वर करे यह सबका कल्याण साधन करे...।" हिन्दीके आचार्य पं० महावीर-प्रसादजी द्विवेदी।